गृ ह ल क्ष्मी

[भारतीय ग्राम-समाज निर्माण में सहयोगिनी,
सत्याग्रमयी ग्राम-नारी का एक
खण्डकाव्यात्मक चित्र]

लेखक
गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'

१९५७
राजेन्द्रगुप्त एण्ड कम्पनी
16 B/4 आसफअली रोड
नई दिल्ली

प्रकाशक
राजेन्द्र गुप्त एण्ड कम्पनी
16 B/4 आसफअली रोड, नई दिल्ली

मूल्य २)

मुद्रक
श्यामकुमार गर्ग
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस
क्वींस रोड, दिल्ली

विज्ञापन

मेरे प्रयाण' नामक खण्डकाव्य का सहृदय पाठकों तथा उत्तर प्रदेश, केरल आदि राज्यों के शिक्षा विभागों ने जो स्वागत किया, उससे उत्साहित होकर 'गहलक्ष्मी' नामक यह खण्डकाव्य लेकर प्रस्तुत हो रहा हूँ। आज हमारा ग्रामीण नारी समाज अशिक्षा के अन्धकार में नितान्त निमग्न हो रहा है, कहीं राधा जैसी कलह प्रिय सास है तो कहीं दयावती जैसी बेढंगी बहू भी विद्यमान है। राधा का गायत्री देवी के रूप में तथा दयावती का विमला के रूप में परिणत होना ही वह एकमात्र उपचार है जिसके द्वारा हमारे वर्तमान सामाजिक जीवन की शुद्धि सम्भव है। इस खण्डकाव्य की कहानी कही गयी है ग्रामीण परिवार को लक्ष्य करके, लेकिन आत्म-त्याग सेवा आदि जिन आदर्शों की प्रतिष्ठापना इसमें की गयी है, उनके प्रकाश से नागरिक जीवन का भी विकास और नवजीवन प्राप्त हो सकता है।

नारी केवल प्रेयसी नहीं है वह दुहिता बहन, सहचरी और माता भी है। आज का युग, अस्थिरता की अतिशयता में, अपनी प्यास मिटाने के लिए, उसे प्रेयसी रूप में ग्रहण करके तृप्त है, उसे नारी का रचनात्मक शीतल स्वरूप रुचिकर नहीं लग रहा है किन्तु आज के प्रमाद और उन्माद के लिए कल हमारा पश्चात्ताप सुनिश्चित है आज सर्वनाश को ही परम प्रिय मानकर हम अपने ही हाथों स्वर्णपात्र को चकनाचूर कर रहे हैं, कल हम एक-एक कण को एकत्र करके समूचा स्वर्ण-पात्र बनाने की कल्पना को लेकर पागलों की तरह घूमते फिरेंगे।

नारी समाज की माता है। माता के रूप में उसका आदर होना चाहिए तथा उसे ऐसी स्थिति में नहीं पड़ने देना चाहिए कि वह अपनी महत्ता के प्रति स्वयं ही विस्मरणशील हो जाय। यदि हम इस सम्बन्ध में सावधानी नहीं रखेंगे और माता के स्वरूप में विकृति उत्पन्न होने देंगे तो वह विकृति स्वयं हमारी विकृति का कारण बन जायगी। हमें यह सदैव स्मरण रखना चाहिए—

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'

—गिरिजादत्त शुक्ल 'गिरीश'

सर्ग-सूची

	पृष्ठ
प्रथम मग	५–१७
द्वितीय सर्ग	१८–४५
तृतीय सर्ग	४६–५७
चतुथ सग	५८–६८
पचम सग	६९–८०
पष्ठ सग	८१–९४
सप्तम सर्ग	९५–११३

प्रथम सर्ग

(वीर ताटंक छंद)

अचल समाधि-मग्न नीरवता—
मे भर कर खर हाहाकार,
जिसने किया रुचिर कौशल से
निराकार को भी साकार,
जग-मग सजग बनाया जिसने
मनसिज को दे शर सुकुमार,
उसी महादेवी आद्या को
मेरी दण्ड प्रणति शत वार ।१।

चपल कटाक्ष-पात से जिसके
जगा कामना का अगार,
अनायास ही उसे बुझाया
जिसने देकर दृग जलधार,
करुणा क्रोध सतत वितरित कर
करती जो पालन - संहार,
उसी महादेवी आद्या को
मेरी दण्ड प्रणति शत वार ।२।

रचना-कौशल दिखा - दिखा कर
जो हर का मन हर लेती,
ताण्डव - नृत्योन्माद बढा कर
उन्हे अक मे भर लेती,
विरह-सृष्टि म, मिलन-प्रलय म
जिसका निरुपम रस-आगार,
उसी महादेवी आद्या को
मेरी दण्ड-प्रणति शत वार ।३।

प्रति निर्मिति मे, प्रति विनाश मे
जिसकी लीला लहराती,
निरुद्देश्यता अमर रसिकता—
का मधुमय गायन गाती,
जिसकी निरुद्देश्यता मे भी
वही वेदना छिपी अपार,
उसी महादेवी आद्या को
मेरी दण्ड प्रणति शत वार ।४।

दानव को विमूढ करने को
हरि ने जिसका लिया स्वरूप,
महिषासुर का वध करने को
जो चडी बन दिखी अनूप,
शिव स्वरूप होकर आया शव
पाकर जिससे शक्ति प्रसार,
उसी महादेवी आद्या को
मेरी दण्ड प्रणति शत वार ।५।

पुरुप और नारी दोनो का
जिसके प्रति हो रहा प्रमाद,
जिसकी प्रसन्नता खोकर ही
विश्व पा रहा विपम विपाद,
जिसकी कृपा विना दुर्वल का
सभव नही कभी उद्धार,
उसी महादेवी आद्या को
मेरी दण्ड-प्रणति शत बार ।६।

किरण किरणमाली की ताकर
अधकार छाटा सारा,
मैले सर का मल हरने को
लहरायी गगा धारा,
चातक तृपा हरण के हित जो
करती स्वाती-सलिल प्रसार,
उसी महादेवी आद्या को
मेरी दण्ड-प्रणति शत बार ।७।

पौरुप, शक्ति सो रहे दोनो
आज देश मे वन पापाण,
जिस अम्बा की करुणा से ही
उनमे फिर आ सकता प्राण,
नाश, सहरण, प्रलय अनतर
करती जो नव सृष्टि प्रसार,
उसी महादेवी आद्या को
मेरी दण्ड-प्रणति शत बार ।८।

ब्रह्मदेव की जो गृहलक्ष्मी
सृष्टि-सदन-रक्षण म लीन,
गति भी जिसकी देख तीव्र गति
होती विचलित, त्रोडित, दीन,
चीटी से ले मानव तक की
प्रबन्धिका जो बनी उदार,
उसी महादेवी आद्या को
मेरी दण्ड-प्रणति शत बार।९।

आद्या का स्वरूप ही थी वह
विमला गृहलक्ष्मी अभिराम,
सहनशीलता से, धीरज से
जिसने सकल सँवारे काम।
राधा - सी विकराल सास म
कर पायी करुणा-सचार,
उस आधुनिक महादेवी को
मेरी दण्ड प्रणति शत बार।१०।

लिखता हूँ यह कथा निराली
विमला की नव रस से सिक्त,
सहृदय पढ़ें, देवियो के प्रति
जड निदयता से हो रिक्त।
अनाचार नारी प्रति करके
अपना ही न करें सहार।
सेवामयी जगत-माता को
दें नित दण्ड प्रणति शत बार।११।

चक्रवाक-वेदना विगत थी,
विहग-वृन्द थे चहक रहे,
चटक रही थी कोमल कलिया
कानन-पथ थे महक रहे,
पख फडफडाते थे खग-शिशु
नीडो को कर मोद प्रदान,
कठ कमल मे मुदे मधुप से
गीतो को दे नव आह्वान ।१२।

आश्वासन देकर सरोज को—
क्षण म आयेंगे दिनकर,
'कथा भोग लो अब'—कुमुदो से
मानो हँस हँस कर कह कर,
चली गयी थी औचक आकर
उषा प्रकृति की दूती सी,
गति का दे सदेश सभी को
छवि की राशि अछूती सी ।१३।

विरति-सेज पर शयित सरित की
लहरो को द्रुत जगा जगा,
मलय-पवन क्रीडा म रत थी
जग को रति म पगा पगा।
लतिकाओ को छेड रही थी,
तरु पल्लव थी हिला रही,
कलियो के उत्कठित मन को
थी जीवन-मधु पिला रही ।१४।

दिनमणि के स्वागत हित क्या वह
ये सब साज सजाती थी ?
उषा-विरह से ताप न पायें
श्रमित उपाय बढाती थी।
मधु सिंचित मुसुकानि मधुरिमा
से वंचित वह सुकुमारी—
अबला किंतु कहा से लाती
अरुणाभा रंजित सारी ? १५।

धीरे - धीरे तप्त दिवाकर
आये तप संदेश लिये,
जीवन-कर्म अभेद भावना
का निर्घोष विशेष लिये।
आंदोलित बोले-से दिनकर
देकर कर अनुराग समेत,
'सेवा करो समाज-देव की
अंधकार हो आप अचेत'।१६।

तरणि - ज्ञान - संदेशधारिणी
किरणें बिचरी चारो ओर,
वत्सलतामय आलिंगन दे
बनी लोक के हित चितचोर।
अगहन से माधुर्य ग्रहण कर
देती थी आमोद अपार,
पशु, पक्षी, तरु, मानव सब को
नव - जीवन का मंजुल सार।१७।

नगर-श्री शृंगार-निरत थी
करती कानन-छवि से होड ।
दोनो विहसित उल्लासो से
रुचि-सम्बन्ध रही थी जोड ।
मजु प्रयाग नगर की शोभा
ऐसे समय निराली थी,
गाती कीर्त्ति त्रिवेणी जिसकी
तरगिता मतवाली थी ।१८।

'छवि-निवास' था भवन मनोहर
एक वहा अति छविशाली,
जिसको रच शिल्पी ने थी निज
सकल कला दिखला डाली ।
पीत प्रभा प्रभात की उसको
कचन भवन बनाती थी,
उसकी बिम्बित छवि उर मे धर
कालिंदी अँठलाती थी ।१९।

उसके ऊँचे अचल मे स्थित
एक कक्ष अति शोभन था ।
विविध द्वार-वातायन-विलसित
जो आलय सम्मोहन था ।
द्वार और वातायन-पथ से
रवि की किरणें आती थी,
प्रिय सदेश तरणिजा विहसित-
कल्लोलो का लाती थी ।२०।

चौकी एक पडी थी, जिस पर
मोटी दरी बिछी थी एक—
चद्दर से आच्छादित, शोभित
तकिये भी थे वहा अनेक ।
आश्रय लिये शुभ्र तकिये का
एक वही थी नव बाला ।
चचल नयनो से निहारती
दृश्य हृदय हरने वाला ।२१।

मारुत मधुमय झोको ा थी
साडी सिर से सरकायी,
कलित कपोलो पर अलकें थी
बिखर बिखर कर झुक आयी।
होता था अनुमान—भानुजा
ज्यो मिलने को आयी हो—
मा हिमदेवी से, आतुरता
दुहिता उर की लायी हो ।२२।

रुचिर नासिका की सुघराई
देख शुकी ले निज मन मार,
इसी घोपणा-हित हिलती थी
क्या नक्बेसर बारम्बार ?
झूल रहे थे युगल श्रवण मे
कणफूल छविमूल महा ।
क्यो मधुकर-मन भूल जाता
उन फूलो सँग झूल अहा ।२३।

क्रीडित परम बना था बिम्बा
अधर-अरुणिमा-दशन से,
पल्लव, लाल, प्रवाल सभी थे
श्रीहत निज मद-मदन से ।
था न श्याम तिल कल कपोल पर
एक भ्रमर रस पीने मे,
लीन हुआ था निजता खोकर
विकच कमल के सीने मे ।२४।

मृदुल भुजा अवलोकन करके
लज्जित तरु शाखाएँ थी ।
तन-लावण्य विलोक निराला
लज्जा मग्न लताएँ थी ।
नवयौवन - माली - कर - सज्जित
अग-कुसुम थे कान्त महा ।
जिनका वर सौरभ करता था
अलि के मन को भ्रान्त महा ।२५।

पकज कर मे कल ककरण था
हार गले मे मनहारी ।
कौन न वलिहारी हो जाता
मूर्ति निहार सरल प्यारी ।
पीत वसन म कचन-तन की
मादक दीप्ति वडी ही थी ।
अधिक कहे क्या मदन महीपति—
की छविधाम छडी ही थी ।२६।

तोष नही पाती थी बाला
दृश्य देख पर भी निर्दोष ।
रीता सा प्रतीत होता था
प्रकृति महादेवी का कोष ।
मुख पर एक खिची थी रेखा
चिन्ता की परिचायक सी,
सरस सलोनी रूप छटा की
थी वह भी उन्नायक सी ।२७।

इसी समय अरुणिम अधरों पर
शशि किरणें धारण करती,
स्वर्ण-अलकारो मे क्रीडा—
भाव देह-द्युति से भरती ।
चाल मरालो को सिखलाती
आयी एक वहाँ बाला,
विमल वदन की उज्ज्वलता से
चद्रानन करती काला ।२८।

नयन विलास पढा था उसने
सरल मृगी बालाओ से,
मन हरना सीखा था उसने
कुसुमित ललित लताओ से ।
अमृत शलाका सी लोचन हित
मृत हित सजीवनी समान,
आयी वह अधरो पर लेकर
मलय समीरण सी मुसकान ।२९।

लोचन उभय प्रथम बाला का
उसने कर से मूद लिया,
उत्तर पाया, "ललिते, तुमने
आकर मुझको जिला दिया।
अब विवाह होने वाला है
सास-सदन जाना होगा।
चिन्ता आज इसी की व्यापी
क्लेश अमित पाना होगा।३०।

ललिता पीछे से हट कर उस
बाला के आगे आयी।
बोली—"नलिनि ! बता दो किससे
यह शिक्षा तुमने पायी।
अभिनव ढग कहाँ से आया
कैसे बदला रग भला ?
हृदयोल्लास छिपाने की यह
कब से पढ ली नृत्य - कला ?३१।

अरुण कपोलो मे नलिनि के
और अरुणिमा चढ आयी,
तरुण सरोज विलोचन ने भी
मादकता नूतन पायी।
सुकुमारी वह पवन प्रेरिता
कान्त लता जैसी डोली,
डाल गले में बाहु सखी के
कल कोकिल कठी बोली।३२।

"ललिते ! क्या सम्भव है यह मैं
तुमसे बात छिपाऊँगी ?
विलग भाव तुमसे रखने का
हृदय कहा से लाऊँगी ?
तुमसे कपट करूँ तो जीवन
रस-विहीन कैसा होगा,
नहीं सोच भी सकती हूँ सखि !
वह मलीन जैसा होगा ।३३।

सच्ची मान कहूँ जो ललिते !
विपद पडी विकराल बडी,
डर जाती हूँ, कँप जाती हूँ
होती हूँ बेहाल बडी ।
जननी-जनक विरह की स्मृति ही
मेरा हृदय हिलाती थी,
मैं इस पीडा से ही विचलित
रह रह कर हो जाती थी ।३४।

लेकिन कल आयी भगिनी का
हाल सुना मैंने जब से,
शीस धुन रही हूँ मैं समधिक
विकल, अधीर बनी तब से ।
हृदय विदारिणि विपद बहन की
सुन सखि शीघ्र बताऊँगी,
मास सदन म जो गति होती
तुमको सकल सुनाऊँगी ।"३५।

'विमला बहन आ गयी यह तो
बात नहीं थी मुझको ज्ञात,
सीधी यहाँ चली आयी हूँ,
आते ही पाया आघात।
दर्शन कर आऊँ पहले मैं
तब लूगी सब बातें जान।
तब तक उत्कंठा रोकूगी
जाना अति आवश्यक मान।" ३६।

यह कह ललिता चली गयी जब
नलिनी फिर हो गयी उदास,
उर उद्‌गार प्रगट करने को
आतुरता को मिला विकास।
एक एक क्षण जोह रही थी—
ललिता कब फिर आ जावे।
उसकी शीतल वचनावलि से
हृदय शान्ति कुछ पा जावे।३७।

द्वितीय सर्ग

(वीर ताटंक छंद)

विमला का दर्शन कर ललिता
आयी जब नलिनी के पास,
चिन्ता, जिज्ञासा का उसके—
आनन पर था विरस विकास।
साग्रह बोली, "बहन बताओ,
विमला जीजी का सब हाल,
मैं भी जानू सास - सदन मे
विपदा जो आती विकराल।" १।

उत्तर मे नलिनी तब बोली,
"ललिते, बात बताऊँ एक।
शिक्षा रहित सास-घर म ही
दिखता शोचनीय अविवेक।
शिक्षित सास जहाँ मिल जाती
देती वह माता का प्यार,
आगत वधू जहाँ पर पाती
रसमय जीवन का आधार।२।

सिंधु-पार जा बाबू जी ने
पाया बहिष्कार जातीय।
किया महा अपराध उन्होने
सीमा त्यागी निज देशीय।
बने कूप-मण्डूक यही यदि—
रहते, श्रेष्ठ कहाते वे।
चन्दन - चर्चित माने जाते
धूल यही यदि खाते वे।३।

'बिस्तृत जीवन के विकास-हित,
हम भ्रमण करना होगा।
यदि न करगे, अगति पक मे—
ता धँस के मरना होगा।'
मरणोन्मुख समाज म जिसने—
माना इसको वही सदोष,
वही बने निर्दोप हो रहे—
थे जो सब दोपो के कोप।४।

जो हो बहिष्कार के कारण
मिल न सका शिक्षित परिवार,
करना पडा विवश बाबू को
व्याह ग्राम मे तब स्वीकार।
बिमला जीजी की विपत्ति का
बोया गया बीज इस तौर।
मेरा भी होनेवाला है
हाल वही, कुछ दिन हैं और।५।

गावो मे लाखो ही होगी
सास अशिक्षित औ' मतिहीन,
उनके हाथो पडी वधू का
भाग्य नही होगा क्यो दीन ?
विधि-विडम्बना से जीजी ने
पायी जो अति दुर्लभ सास,
उससे करके होड हुई थी
अगणित सासे निपट निराश ।६।

ननद, जिठानी भी घर मे थी
उनका भी लेकर सहयोग ।
जीजा और वडे जीजा का
पाकर मौन, अपावन योग ।
सोचा करती थी निशिदिन ही
कैसे हो विकसित षडयन्त्र,
जीजी को पीडित करने का
किस प्रकार सज्जित हो यत्र ।७।

यद्यपि वहन सदन-कार्यो को
थी सानद किया करती,
अवसर टीका - टिप्पणियो वे
थी न कदापि दिया करती,
प्रतिदिन जग के वडे सवेरे
थी वह नहा लिया करती,
चौका - वर्तन और रसोई
थी विधि साथ किया करती ।८।

सास - जिठानी - चरण चापने—
भी थी अवसर से जाती,
करती थी तत्काल जिसे थी
करने की आज्ञा पाती।
तो भी सास उसे देती थी
तरह तरह के कष्ट कडे।
उसके पीडन-हित करती थी
वह दिन - रात प्रयत्न बडे।९।

पाती थी झगडा करने मे
वह आनद सदैव बडा,
बनती थी अत्यन्त विकल जब
होता था न कभी झगडा।
झगडे नये उठाने ही में
वह दिन - रात बिताती थी,
शान्ति विनाशन की चाहों मे
आप मरी वह जाती थी।१०।

रोगो से चगी होती थी
जब थी झगडा कर पाती,
झगडे के बिन बेचनी से
वह थी कृश-तन हो जाती।
झगडा ही उसका खाना था
झगडा था उसका पीना,
झगडे के वातावरण में
उसका होता था जीना।११।

झगड़े ही की चिन्ता में वह
सोती - जगती रहती थी।
बैठी-लेटी झगड़ ही की—
धारा मे वह बहती थी।
रँगी रग म झगड़े के थी
झगड़ा उसका प्यारा था,
उसके मुख दर्शन बिन उसका
दुखमय जीवन सारा था।१२।

झगड़े ही के स्वाद के लिए
उसने नर-तनु धारा था,
झगड़े मे रमना ही उसने
स्वर्ग - प्राप्ति निरधारा था।
झगड़ा आँखो का तारा था
परम दुलारा था झगड़ा,
वह राधा थी और रँगीला
मोहन प्यारा था झगड़ा।१३।

बोली मधुर बहन की उसके—
उर म थी शर सी लगती,
स्वाथ न सधने से उसकी ओ-
धाग्नि भभक कर थी जगती।
जब मिलता न कलह का कारण
रहती थी वह मन मारे,
विपदा कौन पड़ी है पूछा—
करते थे पुर जन सारे।१४।

बेबस होकर ननद, जिठानी—
को उसकाया करती थी।
बैर घृणा के भाव अपरिमित
उनके मन म भरती थी।
किन्तु निरस्त्र उन्हे करती थी
भगिनी की मृदुता सानी,
षड्यन्त्रो की नाशनशीला
मंजु मनोहारिणि वानी।१५।

चातक जैसे स्वाती-जल का
कमल कली रवि का [illegible],
बाट जोहती ही रहती था
सास कुअवसर का [illegible]।
भगिनी-भाग्य-गगन की कारा—
कर वह [illegible] [illegible],
जो कुटिला की [illegible]—
वे हित [illegible] [illegible]।१६।

रजनी बीत गयी [illegible]
[illegible],
मलयाचल [illegible]
[illegible]।
चीटो [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

[illegible]

जेठ नही घर को लौटे थे
भोजन था न किया अब लौं,
बहन उन्ही का पथ लखती थी
घटना करुण घटी तब लौं।
उसके लोचन क्लान्त, विकल हो
बद स्वय थ हो जाते।
श्रान्ति-अलसता-अरिगण पर थे
विजयी किमपि न हो पाते।१८।

भीत सहारे बठी-बैठी
अकस्मात वह ऊँघ गयी।
शका की न हाय अबला ने
आवेगी आपत्ति नयी।
बिल्ली ने आके क्षण मे ही
भोजन सकल समाप्त किया।
दीये ने दम तोड उसी दम
गृह को तम से व्याप्त किया।१९।

आध घडी गत हो जाने पर
भगिनी औचक ही जागी।
दीप जला जब उसने देखा।
काप उठी तब हतभागी।
दीखे खड पडे रोटी के
दाल गिरी महि दृष्टि पडी।
बिखरे चावल हाय निरख कर
दृग से हो जलवृष्टि पडी।२०।

टूटा वज्र अचानक उस पर
आकुल विकल नितात बनी,
असहाया अवलोक अवस्था
अपनी अतिशय भ्रान्त बनी।
"अयि मायाविनि निद्रे! तू ने
आज अनर्थ किया कैसा!
नेत्र! तुम्हे यह उचित नही था
धोखा हाय दिया कैसा!" ।२१।

यो कह अमित विकल होती थी
भगिनी वदन मलीन महा,
सलिल विहीन मीन सी वह थी
तलफ रही वन दीन महा।
ठोक-ठोक माथा निज कर से
वह नत शीश लगी रोने,
उसकी विपद विलोक दिया भी
कम्पित-गात लगा होने।२२।

जेठ रसोईगृह मे आये
भोजन हेतु समय ऐसे।
समझ सके न रहस्य वहाँ का
और समझते ही कैसे?
भोजन आ न रहा था आगे
और न था परसा जाता,
केवल सिसिक सिसिक रोने का
स्वर था कानो में आता।२३।

इसी समय मे किसी कायवश
सास वहाँ औचक आयी,
उसके कोपानल ने आहुति,
हाल यहाँ का लख पायी।
जैसे सिंहिनी किसी हरिणि पर
करिणि कमलिनी पर जैसे,
टूट पडी असहाय वहन पर
वह विकराल - वदनि वैसे।२४।

जेठ तुरन्त उठे चौके से
ननद, जिठानी भी आयी,
जगसहारिणि काली के सम
दोनो भगिनी पर धायी।
जो कुछ हाथ लगा तीनो ने
उससे ही उसको मारा।
जैसे गाय कसाई मारें
भाव दया का तज सारा।२५।

उसको मृतक समान बना के
अपनी मनभायी करके,
करने शयन गयी राक्षसिया
तोष अमित उर मे भर के।
धीरज की सब शक्ति गँवा कर
भगिनी विकल अपार बनी,
शान्त निशा मे रोयी जी भर
मग्न-नयन-जल-धार बनी।२६।

आश्रय हीना दीना थी वह
सब प्रकार से बलहीना।
नही मौत भी तो आती थी
उसको पडता था जीना।
कम्पित कान्त शिखा को करके
सहृदय दीप विकल भारी—
कहता था मानो 'मत रोओ
गत होगी विपदा सारी' ।२७।

प्रात काल उसे ज्वर आया
काय परन्तु पडे करने,
क्रमश इससे रूप भयकर
दिन दिन रोग लगा धरने।
तब उसके हिस्से मे घर का
कोना, जजर खाट पडी,
करुणा करता कौन वहा पर
उलटे सब की डाट पडी।२८।

बोली सास बना कर मुंह को
"वह है डिप्टी की बेटी,
मैके मे सब काल पलँग पर—
ही तो रहती थी लेटी।
कैसे कार्य करेंगे गृह का
कर कोमल कमलो जैसे,
तृण भी था न उठाया महि से
वज्र उठायेंगे कैसे ?" ।२६।

"फूलो की शैया सजवा दो
वह रानी बन के सोवे,
ठीक तभी होगा जब दासी
पखा करने को होवे।"
व्यग भरे ये तीक्ष्ण वचन जब
मम भगिनी के कान पडे,
कर्मों मे प्रेरित करने के
सदेशो से जान पडे।३०।

यत्न किया उसने उठने का
शक्ति परन्तु न तन मे थी,
पीडा परम, न गृह-कार्यों को
कर सकने की मन मे थी।
थोडा सँभल उठी वह ज्यो ही
चक्कर सा शिर मे आया,
कापी, अमित अमावस्या-तम
आखो के आगे छाया।३१।

आज्ञा पालन-चेष्टाओ को
निर्दय ज्वर ने भग किया,
हाय गिरा के महि पर उसको
आहत उसका अग किया।
"चाण्डालिन ! उनसे चल चालें
जिनको भ्रम में डाल सके।
बद्ध बना जिनको यह तेरा
चालाकी का जाल सके।"।३२।

यों ही कहती सास कराला
दीना भगिनी पर झपटी,
चीनी पर चींटें सी, लोहू
की प्यासी डायन लपटी।
ननद, जिठानी ने आकर के
इसमे झटपट योग दिया,
और सकल पैशाचिक बल का
उस पर हाय प्रयोग किया।३३।

"डिप्टी की बेटी हैं तो मैं
हड्डी इनकी तोड़ूँगी,
दम मे दम मेरे है तो कर—
ठीक इन्हे मैं छोड़ूँगी।"
करुण काड करके हट आयी,
यों ही सास कथन करती,
बेटी और पतोहू सँग निज
गौरवमाल ग्रथन करती।३४।

करुणाहीन अधम ज्वर ने भी
अपना रूप कराल किया,
घोर निराशा ने भगिनी के
मन मे डेरा डाल दिया।
मरणासन्न जान कर भी, था
पास नहीं कोई जाता,
एक बूद आसू भी कोई
उस पर था न बहा पाता।३५।

पास-पड़ोस-निवासिनि आकर
आश्वासन जो देती थी,
सास-विरोध प्रबल का पहले
वे साहस कर लेती थी।
क्रमश भगिनि विपत्ति ने उनमे
करुणा का सचार किया,
मातृ भावनाएँ उमँगा कर
हृदय अपार उदार किया।३६।

सास-वचन-शर विद्ध बनी वे
पर न कहा उसका माना,
दृढ सकल्प दवा करने का
सब ने निज जी मे ठाना।
षड्यत्रो की रचनाएँ थी
सास सदैव किया करती,
घर आने का अवसर उनको
भरसक थी न दिया करती।३७।

किन्तु निपीडित पीडा वारण—
के दृढ भावो के आगे,
बाधाओ ने शीस नवाया
विघ्न सभी डर कर भागे।
ज्वर के हृदय-मरुस्थल मे भी
करुणा का कल जल निकला,
भगिनि - निरुजता - लाभ - सरोरुह
उसमें रम्य नवल निकला।३८।

गृहकार्यों को करने से फिर
विमला रुग्ण न हो जाये—
इस भय ने निश्चय करवाया
वह निज मैके को जाये।
सबने की प्रार्थना सास से
बात विविध विधि समझायी,
यत्न निरंतर करते रहने—
पर उसकी स्वीकृति पायी।३९।

बोली बहन चरण लग सबके
"करती अमित ढिठाई हूँ।
एक निवेदन करने के हित
सेवा मे मैं आयी हूँ।
गुरुजन - पूजन से बढ जीवन—
मे है कोई कार्य नही।
जाता है वह जीव नरक मे
जिसको यह व्रत धार्य नही।४०।

अम्बचरण - अम्बुज - विरहानल
का दे मत संताप मुझे,
ज्वर के तापो से भी भीषण
होगा यह परिताप मुझे।"
करके श्रवण मनोहर वाणी
भगिनी की यह विनय सनी,
सजल - नयन महिला हो आयी
अतिशय विह्वल सकल बनी।४१।

बोली, "देवी है इस पुर की
क्यो तू यो न कहे विमले!
तुझसी पुत्रवधू हो जग मे
सभी जनो की हे सरले!
पुत्रि! परन्तु पिता के गृह को
तुझको जाना ही होगा,
हम सबकी इच्छा के आगे
शीस झुकाना ही होगा।" ।४२।

निज भावो को सवजनो की
हृदयेच्छा मे मग्न किये,
आज्ञा - पालन - विकल कुसुम पर
मन मधुकर को लग्न किये,
जब मध्याह्न समय सबसे मिल
दृग-जल डाल चली भगिनी,
जलद-पटल ने छाया कर दी
पवन मनोहारिणी बनी ।४३।

जीजा का वियोग भी भगिनी-
हृदय सालता था इस काल,
दर्शन उनका नही मिलेगा
सोच सोच वह थी बेहाल।
और वहा जीजा रहते थे
अपनी ही तरग में मग्न।
भारी ग्रथो के पढने म
या स्वदेश-सेवा में लग्न ।४४।

उनकी देश-परिधि के भीतर
भगिनी का था नाम नहीं।
औरों की सेवा में तत्पर
भगिनी से कुछ काम नहीं।
अंधकार म ताराओं से
घर में बने रहे सब काल,
करुणाजनक विपत्ति बहन की
सके नहीं तिल भर भी टाल।४५।

जाती देख बहन को गृह का
तोता भाभी कह रोया,
रोयी गैया, रोया बछड़ा,
हृदय-धैर्य सब ने खोया।
पतित वारि के व्याज गिरा के
आँसू की बूंदे न्यारी,
कम्पित-गात लता आँगन की
रोयी पाकर दुख भारी।४६।

ग्रामवासिनी ललनाएँ सब
उसको 'जाती लख रोयीं,
ओस व्याज से जसे रोये
चद्र वियोग-समय कोईं।
सास, जिठानी और ननद की
आँखों से भी जल निकला,
सोच यही कि सतायेगी अब—
किसको, हाय चली विमला।४७।

कटक सकल हटा मारुत ने
मग मे सरस कुसुम डाले,
फिर भी वह डरता था, भगिनी
के पद मे न पडें छाले।
मग के मजु लता-द्रुम मारे
कान्ति निराली पाते थे।
रजत-वरण रज कण भूपित पद—
की जब श्रान्ति मिटाते थे।४८।

सध्या समय तरणिजा तट के
आम्र विपिन मे वे आये,
क्लान्ति-जलधि के मजुल मोती
भगिनि - कपोलो पर छाये।
अग समस्त शिथिल श्रम से थे
आगे थे न चरण पडते,
श्रान्ति-निपीडित, लज्जा प्रेरित
वे थे रह रह कर अडते।४६।

एक विटप-तल दोनो बैठे
सोयी बहन वहा तत्काल,
हाय ! न सोचा था, क्या होगा
अल्प काल मे मेरा हाल।
देवर उसको छोड अकेली
हाय भवन अपने भागे।
मानव होकर भी कठोर पवि-
पाहनता म अनुरागे।५०।

धीरे धीरे शान्त गगन मे
कान्त निशा-वल्लभ आये,
मंजु मोतियों की नव माला
प्राणप्रिया के हित लाये।
उनकी चारु चमक चाँदी सी
किसका चित्त न हरती थी,
कलित कला-क्रीडा कुमुदों पर
मुनि मन मोहित करती थी।५१।

ललित लता, विकसित कलिका के
आलिंगन का रस लेता,
मंद मलय मारुत बहता था
मादक शीतलता देता।
विटपों से लिपटी अलबेली
वल्लरियाँ लहराती थीं,
राजित कान्त रजत-किरणों मे
कुसुमों मिस मुसकाती थी।५२।

तरल तरंगवती रवि-तनया
बहती थी कलरव करती,
शशि तारक छाया चंचल पड़
श्यामल जल मे मन हरती।
विमल विभा वर विधु की सरि मे
विशद छटा छिटकाती थी,
विकसित वदन नवल कुमुदों का
चुम्बन कर मुद पाती थी।५३।

कम्पित दल तरु की शाखाएँ
शोभा भार-विनीता थी,
खग-कुल-केलि कला की साक्षिनि
सृष्टि विषाद-व्यतीता थी।
तोतों की टोलियाँ दूर से
लौट लौट थी शयित समोद—
नीड-गोद में, शिशुत्रों के हित
नीड बनाकर अपनी गोद।५४।

इसी समय जागी जब भगिनी
विपिन विजनता ने घेरा।
अधीरता ने उसके जी में
आ कर के डाला डेरा।
सजल जलद से जलज-विलोचन
जल की धार बहाते थे,
अमल कपोल कमल से सर में
स्नान अनवरत पाते थे।५५।

जो सखियों के संग भवन में
छाया से भी डर जावे।
निर्जन वन में वह एकाकी !
क्यों न कलेजा हिल जावे।
रो रो कर असहाय बहन जब
क्रमशः क्लान्त नितांत बनी,
सोयी विटप-तले पीडा भी
मानो सोयी शान्त बनी।५६।

राज-भवन में विहरण-योग्या
        निर्जन वन में सोती थी।
मानस हंसिनि निर्जल सर में
        बीज विकलता बोती थी।
नवला नलिनी रस पीने की
        जो अलिनी अधिकारिणि थी।
कुटज कुसुम-रस-पान घड़ी यह—
        उसकी हृदय-विदारिणि थी।५७।

छन छन में नव छवि से छिति पर
        छिटिक छपाकर-किरण चली,
विलसित जगरंजिनि ज्योत्स्ना में
        विलस चली कल कान्ति-कली।
क्रमशः दस बजने की वेला
        आयी शोभन शान्ति लिये।
दिन भर कार्यों में रत जग के
        तन-लोचन हित क्लान्ति लिये।५८।

अति सुकुमार कुसुम-लतिका-सम
        प्रति पल आन्दोलित-रागी—
चपल समीर बना निद्रित सा
        स्फूर्ति गयी उसकी भागी।
तरल तरंगिणि तरंगित-तनूजा
        थी अति [illegible] [illegible] गता,
किन्तु अलसता-वश उन्मन भी
        तन की मन की चञ्चलता।५९।

तरुगण के कोमल दल-शिशु ने
निज चाचल्य सकल छोडा,
क्लान्ति-विकलता के मोचन को
नाता निद्रा से जोडा।
बेला और चमेली-दल म
तारा, तारापति तन मे,
दीख पडा शथिल्य निराला
विकच कुमोदिनि के वन मे ।६०।

ऐसे समय किसी जन के पग-
चालन की ध्वनि कान पडी,
वनस्थली की सहज शान्ति मे
विघ्नकरी सी जान पडी।
उसके शिर पर सित पगडी की
ज्योत्स्ना मे थी दिव्य छटा,
ललित भाल मे तिलक लसित था
देता जो शशि गर्व घटा ।६१।

विशद वदन दपण था मन के—
सात्त्विक भावो का आला,
शान्तिमयी शोभा ने जिसको
केलि मदन था कर डाला।
श्वेत अंगरखा, श्वेत दुपट्टा
सरलपना टपकाता था,
धोती श्वेत, उपानह सादा
भक्ति भाव उपजाता था ।६२।

अब उस विटप-तले वह आया
भगिनी थी सो रही जहाँ।
आगे कोई होगा इसका
विदित उसे था हाल कहा ?
चरण रुके औचक ही उसने
भगिनी से ठोकर खायी,
चौंक पडी भगिनी भी जागी
आगत को लख अकुलायी।६३।

अमल कपोलो मे कर क्रीडा
व्रीडा ने भर दी लाली,
अलसानी आखो म नव छवि
शील, विनय ने भी डाली।
मन का मुकुर मनोहर मुख था
घबराहट थी लसित जहा,
जो ज्योत्स्ना मे झलक रही थी
होगी ऐसी कान्ति कहाँ ?।६४।

भय से रोम खडे हो आये,
अबला भगिनी काँप पडी,
जैसे पवन लगे लहराये
कुसुमित बेलि ललाम बडी।
सिर से हट आये निज पट को
झटपट ठीक किया उसने,
थोडा सँभल मृगाङ्क-विनिंदक
आनन विनत किया उसने।६५।

औचक आकर श्याम घटा ने
नभतल मे शशि को घेरा।
डाल दिया उस तरु के नीचे
घोर अँधेरे ने डेरा।
राही ने ठोकर खा निज को
करके यत्न सँभाल लिया,
और सहित विस्मय भगिनी से
प्रश्न यही तत्काल किया—।६६।

"है तू कौन, बता हे बाले!
आयी है किस भांति यहा?
सोती है क्यो तरु के नीचे?
कह तेरा है धाम कहा?
कोल-किरात-कुमारी है तो
क्यो है एकाकी वन मे?
जननी-जनक कहां है तेरे?
परम चकित हूं मै मन मे।" ।६७।

डूब गयी भगिनी चिन्ता में
जब ये बातें कान पडी,
पूर्व यातनाएं दृग आगे,
चित्रित जैसी जान पडी।
प्रश्न–मही पर गिर कर शका—
जलमय तक घडा फूटा,
उमड चला नयनो से पानी
दुखमय बधन से छूटा।६८।

धारण धैर्य किया फिर सत्वर
पोंछ विलोचन का पानी,
बोली भगिनी टूटे स्वर मे
मृदु बानी करुणा सानी—
"देव ! नही हूँ कोलिन, भिल्लिनि
हूँ न किरात-कुमारी मैं,
वश - मयक - कलक - स्वरूपा
हूँ दीना द्विज-नारी मैं ।६९।

कातरता-रजनी ने रसना-
नलिनी को फिर बद किया,
तद्गत बोल-भ्रमर को उसने
सहज मौनता-मत्र दिया ।
अस्थिर-चित्त बना आगन्तुक
आकुलता मन में छायी,
बोला फिर, "हे बाले ! बतला
कैसे तू वन मे आयी ?" ।७०।

डोले ललित अधर भगिनी के
क्लान्त कमल के दल ऐसे,
धीरज धारण करके बोली,
विषादिनी जैसे-तैसे—
"जाओ देव, जहाँ जाते हो
पूछो मेरा हाल नही,
मेरे ऐसी भाग्य-विहीना
होगी धरती पर न कही ।७१।

सोऊँ क्यों न विटप के नीचे
मैं अमहाया हाय भला,
ऐसी ही दुर्गति की पात्री
हूँ अब भारत की अवला।"
इतना कह के मौन वनी फिर
दृग से उमडी जल-धारा,
व्याकुल हो राही फिर वोला—
"वाले! हाल वता सारा।" ।७२।

थाम कलेजा भगिनी वोली
वज्र-हृदय दारण करती,
प्रबल विलोचन-जल-धारा का
बलपूर्वक वारण करती—
"अपने माता और पिता की
मैं तो परम दुलारी हूँ,
आखो की पुतली हूँ उनकी
प्राणो से भी प्यारी हूँ ।७३।

"गोद तथा पलने मे रह के
शैशव था बीता मेरा,
सखियो-सग मधुर मुद-मधु था
मन-मधुकर पीता मेरा।
पति के घर जाने के पहले
मैंने क्लेश न जाना था।
विपदा का परिचय विवाह के
कक्‍ण ही से पाना था।" ।७४।

भगिनी-कथन-श्रवण से मानो
बादल को करुणा आयी,
उसने मुक्त किया शशि को फिर
ज्योत्स्ना छिटिकी मनभायी ।
अति आकुल भगिनी-आनन पर
अब आगत के नेत्र पडे,
भगिनी-लोचन भी औचक ही
उसके आनन ओर अडे ।७५।

प्रस्तर मूर्त्ति समान बना वह
राही चकित-थकित हो के,
"हाय पिता" कह विमला दौडी
उसकी ओर व्यथित हो के।
पकड पिता के चरण-कमल को
फूट - फूट भगिनी रोयी ।
धैर्य न कर सकता था धारण
कर के श्रवण रुदन कोई ।७६।

विदलित-हृदय पिता के दृग से
जल की बूदें छलक पडी,
जो आनन पर से बह बहकर
भगिनी सिर पर ढलक पडी ।
स्नेह विषाद विकल वे दोनो
शब्द न कोई बोल सके,
अति असमथ बने न हृदय के
भावो को वे खोल सके ।७७।

धारण करके धैर्य किसी विधि
विकल पिता ने बात कही—
"बेटी, तेरी यह गति कसी ?
कह तो अपना हाल सही ।"
इसके उत्तर मे ही मानो
करुण रुदन-रव और बढा ।
हृदय-विदारकता का पारा
क्रमश ऊंचे और चढा ।७८

वारम्बार पिता ने पूछा,
उत्तर कोई पा न सके ।
रुकता था न रुदन विमला का
अब सह प्रबल व्यथा न सके ।
मूर्च्छित होकर गिरे धरणि पर,
धारा धैर्य न और गया ।
भगिनी ने भी मूर्च्छा खायी
नीरव बन वह ठौर गया ।७९।

शशि-वदनी की विपदा शशि ने
हिम के मिस रो के पूछा,
जान स्वजातीया लतिका ने
दुख कम्पित हो के पूछा,
पत्तों के मर्मर रव मिस तरु—
ने आतुर हो के पूछा,
पवन-ताडिता कालिन्दी ने
अचल भाव खो के पूछा ।८०।

करके श्रवण वहन की गाथा
रो रो मरती है माता,
हाल पिता जी का जैसा है
शब्दो मे न कहा जाता ।
सास - सदन जब जाऊँगी तब
गति यह मेरी भी होगी ।
मेरे जीवन-नभ मे भी तब
घोर अँधेरी ही होगी ।८१।

क्या जाने कैसे लोगो के
मध्य मुझे रहना होगा,
हाय! नही जानें सखि कैसी
धारा म बहना होगा ।
कैसे लोग वहा पर होगे
देश वहा कैसा होगा,
अनजाने जन म जाने से
क्लेश वहाँ कैसा होगा ! ।८२।

इतना करके कथन विकल हो
नवल बाल नलिनी रोयी,
ललिता ने भी सुन सब बातें
व्याकुल हो सुधि-बुधि खोयी ।
घबराहट नलिनी की लख के
विपद-कथा विमला वाली—
करके श्रवण दिख पीडित-से
तापित चित्त किरण माली ।८३।

तृतीय सर्ग

(मराल छंद)

सरल विमला-शैशव की याद
क्षमापति को आयी, निःशंक—
भवन-आँगन में जब वह सृष्टि
छटा की करती थी अकलंक।
कहाँ वे चिंता शून्य विहार!
कहाँ उसकी यह दुर्गति आज!
कहाँ प्रति पल का रोना हाय!
कहाँ वे क्षण-क्षण के नव साज! ।१।

कहाँ फूलों के वन के बीच
पँखुरियों से उसका डरना!
कलेजे पर रख के पाषाण
कहाँ हिमगिरि से अब ढरना!
विहरती थी जब संध्याकाल
लता ले लेती थी तरु ओट,
देखकर मृग कन्या तत्काल
चरण पर आ जाती थी लोट ।२।

प्रकृति-माधुर्य-विमोहित वायु
चमेली चम्पा के मृदु फूल—
गिराती थी लाकर मग-बीच
उसे करने को पद-अनुकूल।
मधुर बचपन के हास-विलास
बाल सखियों के संग आलाप,
बालिका के नित नूतन खेल
याद आकर लाये परिताप।३।

(ताटक छंद)

निज परलोक बनाने के हित
कलित पसारे कर दिनकर—
स्वर्ण-वर्ण वितरित करते थे
आम्रविपिन को पीताम्बर।
ललित विटप के गले लिपट कर
लतिकाएँ लहराती थी।
मंजुल मारुत से प्यारों को
थपकी पा अँठलाती थी।४।
तरुओं की डाली-डाली में
लगी फलों की ढेरी थी,
जिनके सौरभ से मधु-लोलुप
मधुकर प्रीति घनेरी थी।
कहीं पल्लवों में छिप बैठी
कलित कोकिला गाती थी,
जो रस इन्द्रलोक में दुर्लभ
भू पर वह बरसाती थी।५।

तृतीय सर्ग

(मराल छद)

सरल विमला शैशव की याद
क्षमापति को आयी, निःशक—
भवन-आँगन म जब वह सृष्टि
छटा की करती थी अकलक।
कहाँ वे चिन्ता शून्य विहार!
कहा उसकी यह दुर्गति आज!
कहाँ प्रति पल का रोना हाय!
कहाँ वे क्षण-क्षण के नव साज! ।१।

कहा फूलो के वन के बीच
पँखुरियो से उसका डरना!
कलेजे पर रख के पाषाण
कहाँ हिमगिरि से अब ढरना!
विहरती थी जब सध्याकाल
लता ले लेती थी तरु ओट,
देखकर मृग कन्या तत्काल
चरण पर आ जाती थी लोट ।२।

प्रकृति-माधुर्य विमोहित वायु
चमेली चम्पा के मृदु फूल—
गिराती थी लाकर मग-बीच
उसे करने को पद-अनुकूल।
मधुर बचपन के हास-विलास
बाल सखियों के सँग आलाप,
बालिका के नित नूतन खेल
याद आकर लाये परिताप।३।

(ताटक छन्द)

निज परलोक बनाने के हित
कलित पसारे कर दिनकर—
स्वर्ण वर्ण वितरित करते थे
आम्रविपिन को पीताम्बर।
ललित विटप के गले लिपट कर
लतिकाएँ लहराती थी।
मंजुल मारुत से प्यारों की
थपकी पा अँठलाती थी।४।
तरुओ की डाली-डाली में
लगी फलों की ढेरी थी,
जिनके सौरभ से मधु-लोलुप
मधुकर प्रीति घनेरी थी।
कही पल्लवों में छिप बैठी
कलित कोकिला गाती थी,
जो रस इन्द्रलोक मे दुर्लभ
भू पर वह बरसाती थी।५।

इस रसालवन के घेरे में
थी नवीन कुंजें न्यारी,
मानस सरस-विमुग्धकारिणी
प्रकृति लाडली सुकुमारी।
कहीं कुंद कमनीय कुसुम थे
कहीं गुलाबों की क्यारी,
गेंदा कहीं कहीं बेला थे
कहीं चमेली मनहारी।६।

कहीं एक दो पेड़ नीम के
वासित करते थे आराम,
कहीं आँवला सफल खड़ा था
तरगण में बन वद्य ललाम।
जामुन, बेल, कत, कटहल थे
कहीं दीख पड़ते फलवान,
प्रिय अनार, कचनार कहीं था
अरड़ा खड़ा मनोज महान।७।

गौरैया की पाँति कहीं थी
कहीं बुलबुलों की टोली।
कहीं कपोतों की कतार थी
केलि निरत भोली-भाली।
हरे हरे तोतों का जमघट
कहीं दिखाई देता था,
हरएक का [illegible] [illegible] था
पूरा [illegible] का [illegible] था।८।

यहीं क्षमापति जी बहलाने
चले सहज ही आये थे।
किन्तु न शान्ति तनिक भी अपने
उर को वे दे पाये थे।
गये नदी के तट पर भी तो
दृश्य वहां का प्रिय लखकर,
पाये भाव हृदय को जो थे
अधिक अधिकतर पीडितकर।९।

कलित कगारे टूट टूटकर
विरच रहे थे छवि न्यारी,
'बाहुपाश मे मेरे आओ'---
लहरें कहती थीं प्यारी।
जाती थी अज्ञात लोक को
अरुणाभा आलोकमयी,
लडती थीं अंतिम आलिंगन-
हेतु तरंगे शोकमयी।१०।

धीरे धीरे मिटी निशानी
कोटि कोटि कर दिनकर की,
कीर्त्ति कौमुदी फैली भू पर
क्रम क्रम से रजनीवर की।
सरोजिनी सौभाग्य - वंचिता
म्लान मना अब थी इस काल।
विमुदा कुमोदिनी निज वल्लभ-
दर्शन से थी बनी निहाल।११।

काले भौरे रस के लोलुप
सदा प्रणय के दीवाने—
वदीगृह मे वद हो गये
प्रेमकाड कर मनमाने।
विधि-प्रपच मे परिवत्तन की
श्रेणी शृखलिता कैसी,
पल पल मे पट प्रकृति वदलती
विलासिनी कामिनि - जैसी।१२।

आश्रम ही के योग्य विपिन को
लख पाया अतिशय आह्लाद,
प्रकृति छटा की मादकता ने
भरा हृदय मे नव उमाद।
किन्तु जहाँ विमला सोयी थी
चरण वहा पर जव आये,
एक एक कण भाला सा हो—
गडा, अश्रु दृग मे छाये।१३।

शीघ्र सँभाल स्वय को, सोचा—
आश्रम यही वनाऊँगा,
जहाँ पडी थी विमला भू पर
नीव वहीं डलवाऊँगा।
दृढ सकल्प यही ले मन मे
उस दिन गये वहाँ से वे।
उतावली पा गये निराली
जान नहीं कहाँ से वे।१४।

जीवन को चचल करने का
स्मर को आश्वासन देकर,
आया था मधुमास मनोरम
सग उमग विभव लेकर।
जहा जहा रम का अभाव था,
वहा, वहा लावण्य ललाम।
बरसा कर मादक वसत ने
किया विश्व को था अभिराम।१५।

सरल बालिकाएँ कुजो में
फूल तोडने जाती थी।
आती वेला किन्तु लाज से
नीचे गडती आती थी।
बारम्बार वारि मे मुख को--
देख देख सकुचाती थी,
मधुपो को पागल करने का
मधु पर दोष लगाती थी।१६।

इसी ताप से पीडित होकर
विमला वियोगिनी नारी।
प्रिय की स्मृति कर खो बैठी थी
निज अटूट दृढता सारी।
'आह! गयी कितनी दिन-रातें
खबर न ली प्रिय ने मेरी,
कभी न सोचा सपने मे भी
जीती है कि मरी चेरी।१७।

अम्मा की सेवा मे चूकी,
इसमे है क्या उनको रोष ?
हाय राम ! मुझ अभागिनी से
प्रिय को भी न मिला परितोष ।
उनके चरण-कमल के दर्शन
कैसे पाऊँ अब भगवान !
दासी से तो सही न जाती
प्रखर विरह वेदना महान ।१८।

पक्षी होती तो उड कर के
उन्हे तनिक निहार आती,
नेक सहारा तो पा जाती
पीडा से न हार जाती ।
वही उषा है, वही मधुप हैं
वही कमल का खिलना है,
चक्रवाक का सुप्रभात मे
वही प्रेम से मिलना है ।१९।

वही चद्र है, वही चद्रिका
वही पक्ति तारामो की,
छवि है वही ललित लतिकाम्रो
और नवल कलिकाम्रो की ।
उसी भाँति मारुत बहना है
सौरभ से हो मतवाला ।
नव आनन्दामृत से भरता
सब के जीवन का प्याला ।२०

नव बालाएँ बतलाती ह
वैसा ही रसमय ससार,
प्रिय से रहित किन्तु मेरे हित
जगत हो रहा कारागार।
आह दैव! यह कसी गति है,
कसा निमम है यह प्यार,
जो प्यारे के बिन सारे ही
जग को कर देता निस्सार।२१।

इन्हीं विचारो म डूबी थी
विमला अति अनुरागमयी,
आयी ललिता वहा बिहँसती
जैसे कलिका खिली नयी।
बोली—"बडी बहन! क्यो ऐसी
पीडा की हो मूर्त्ति बनी?
क्यो मुख मजु मद दिखता है
जब वसुधा ही स्फूर्त्ति बनी?।२२।

विमला बोली, सब प्रकार से
मैं अभागिनी नारी हूँ,
प्रियतम पद सेवा करने की—
भी न अहह अधिकारी हूँ।
एक वर्ष से ऊपर बीता
चरणा का दशन पाये,
नित्य राह जोहा करती हूँ
हाय! नही स्वामी आये।२३।

उत्तेजित हो बोली ललिता—
"बहन कौन स्वामी तेरे ?
क्या वे ही जो कायरता के
डेरे हैं जीजा मेरे ?
व्याकुल है तू उन्ही के लिए
नही चाहते जो तुझको ?
कितनी सरल हृदय है हा ! हा !
है आश्चय बडा मुझको ।२४।

अनाचार घरवालो का सब
अपनी आखो से देखा,
नेक न बल आया माथे पर
तनी नही भौ की रेखा ।
इतनी उदासीनता जिसम
उसमे कहा प्यार का रग ?
बात और ही है सनेह की
उसकी है और ही उमग ।२५।

होता जो अनुराग हृदय म
तो अधीर वे भी होते ।
तेरी विपदाएँ विलोक के
होते विकल, बिलख रोते ।
जहाँ प्रेम का नाम नही है
अपनेपन का लेश नही ।
क्या आश्चय वहा दिखती है
जो वेदना विशेष नही ।" ।२६।

यह कह मौन हो गयी ललिता
उत्तर मे विमला बोली—
"ललिते ! तेरी बात मुझे तो
आज लगी जैसे गोली।
यदि वे मुझे नही चाह तो
क्या मैं भी उनको छोड़ूँ ?
मेरी बहन ! भला सभव है
मै भी उनसे मुँह मोड़ूँ ! ।२७।

पति-पत्नी-सम्बन्ध सहेली
यो जो अनायास टूटे,
पति की उदासीनता से जो
पत्नी का धीरज छूटे,
कहाँ रहेगा धर्म जगत मे
कहाँ शान्ति का होगा वास ?
सयम-नियम अनाहृत होकर
कहा रहेगे किसके पास ?।२८।

और बता तो कैसे जाना
उन्हे नही है मेरी चाह,
मेरे प्राणेश्वर के मन की
कैसे पायी तू ने थाह ?
मेरी सखी ! कर्म अपना है
सुख दुख का देनेवाला,
एक वही है इस जीवन की
नौका को खेनेवाला ।२६।

मुझे ज्ञात है हृदयेश्वर का
मेरे प्रति जो है अनुराग,
यही कमी है, मुझे न देते
वे पूज्या जननी का भाग।
तिरस्कार करके माता का
वे रक्षा करते मेरी,
तो उदार स्नेही कहलाते
वे परिभाषा मे तेरी ।३०।

लेकर मुझे पृथक् हो जाते
गृह से तोड सभी सम्बन्ध,
मा का, भाभी का, भगिनी का
शील न रखते हो मतिअध।
उनके परम प्रगाढ प्रणय का
तभी तुझे होता विश्वास,
जब बिसार सारे कर्त्तव्या--
को वे बनते मेरे दास ।३१।

मैं ही अपने प्राणनाथ के
जी का हाल जान सकती,
प्रेम शून्य हैं, मैं इसको तो
नही कदापि मान सकती।
मुझको केवल एक व्यथा है
उसको तुझे बताती हूँ,
बाल्यकाल की प्रिया सखी तू
इससे नही छिपाती हूँ ।३२।

अम्मा मुझे क्लेश देती थी,
इसकी था परवाह नही ।
रो धोकर सह लेती थी मैं
थी अपार वह डाह नही ।
हृदयेश्वर के चरण कमल का
दर्शन जब तब पाती थी,
उसी लाभ से अपनी सारी
वह ताडना भुलाती थी ।३३।

किन्तु वहाँ से मुझे विलग कर
उससे वचित कर डाला ।
मेरी निर्बल हृदय-लता पर
डाल दिया निदय पाला ।
जैसे व्याकुल हो उठता है
मरुथल मे गुलाब का फूल,
उसी भाति हूँ दुख-कातरा
रह रह के उठता है शूल ।३४।

यह पीडा, यह विषम वेदना
कर देती जीवन का अत ।
आशा होती जो न हृदय मे
आवेगा फिर सरस वसत ।"
यह कह मौन हो गयी विमला
बरसाया नयनो ने नीर,
थी सब भाति निरुत्तर ललिता
सखी व्यथा से परम अधीर ।३५।

चतुर्थ सर्ग

धीरे धीरे एक वर्ष के
बीत गये दिन औ' रातें।
नहीं भुलायी ग्रामवासियों—
ने, पर, विमला की बातें।
इसी समय में घटित हो गयी
घटना बडी निराली एक,
जिससे विमला की चर्चा को
जीवन के पथ मिले अनेक।१।

विमला के पडोस ही मे था
गायत्री देवी का गेह।
विमला की हितपरणा म वह
थी निमग्न रहती सस्नेह।
विमला जैसी पुत्रवधू वह
पावे थी उसकी यह चाह।
बडे उछाह साथ किया था
उसने प्रिय शकर का ब्याह।२।

शकर जितना ही सुदर था,
मूल्यवान सुगुणो की खान,
वैसी ही कुरूप पत्नी थी
दया मिली दुर्गुणी महान।
अधकार की सगी बहिन थी
कम न काग से गोरी थी,
जैसे अलकतरे म मज्जित—
होकर कढी किशोरी थी।३।

श्वेत कलाधर - मध्य कालिमा
छिटकाती ज्यो छटा अनूप,
त्यो सम्पूर्ण श्याम तन मे था
सरस श्वेत केशो का रूप।
हाथी को सी लघुतम आखें
चश्मो से दब रहती थी।
पढते पढते शक्ति गँवायी
रोब दाब से कहती थी।४।

तरुण शूकरी के थूथन सी
फूली नासा - रध्रो पर,
जीवन भर की निरी कमाई—
सी थी मैल बिछो मन भर।
बातें करना थूक गिराना
साथ साथ थे दोनो काम।
यो ही अधरो को सरसा कर
रस बरसाती थी अविराम।५।

मूल्यवान जाकेट रेशम की
　　रेशम ही की सारी थी,
तन पर गगा-कालिंदी के
　　सगम की छवि न्यारी थी।
काला स्लीपर था पैरो म,
　　सिर के बाल खुले हर दम,
उपन्यास हाथो म शोभित,
　　पढने मे न किसी से कम।६।

यह विचित्रतामयी कामिनी
　　परदे के अनुकूल न थी,
स्वतन्त्रता के साथ सभी से
　　मिलने के प्रतिकूल न थी,
नमस्कार करके घूघट को
　　उसको था न मिला परितोष,
आखे ऊँची करके उसने
　　रिक्त किया था लज्जाकोष।७।

क्षण, क्षण मे वह भाति भाति के
　　वेष बनाती रहती थी।
आगत महिलाओ को हरदम
　　शान दिखाती रहती थी।
कुलागार सी वधू मिली, था
　　किया अधर्म बडा कोई,
गायत्री देवी कहती थी
　　मति धृति उसने थी खोयी।८।

जहाँ-तहाँ उसकी ही चर्चा
ग्राम-निवासी करते थे,
कोई बडी विपद आवेगी
मन ही मन सब डरते थे।
कोई कहता—एक मेम से
जब हो रहे सभी हैरान,
तो जिस ठौर मेम अगणित ह
बचते होंगे कैसे प्राण ।९।

मदभाग्य तो सकल ग्राम है
किन्तु अधिक सबसे वह सास,
सदा डराने को प्रस्तुत है
पिशाचिनी यह जिसके पास।
यो ही राधा अशुभ-दशना,
भयकरी, अघशाला है।
कलह विकासिनि, शुभ विनाशिनी
अवगुण राशि विशाला है ।१०।

एक प्रेतिनी और आ गयी
मानो वह थी नहीं यथेष्ट,
भाई, आये गह अनिष्टकर
प्रतीकार-हित बनो सचेष्ट।
कहा दूसरे ने—हे भाई,
पूजा-पाठ हो गया बद,
देवो की अब कृपा नहीं है,
रजनीचर हैं अति स्वच्छद ।११।

"गायत्री की दुर्गति कैसी !
रोती है आहे भर भर।
सोच रही थी सुख पाऊँगी,
और आ गया दुख अवसर।
अमित वस्तुएँ बडे चाव से
नित्य सँजोती रहती थी,
सचय से न विरत होती थी
सतत असुविधा सहती थी।" ।१२।

"सो जव व्याह हो गया, घर मे—
मानो डायन सी आयी,
अधकार छा गया भयकर
विपद घटा सी घहरायी।
ऐसी वक्र प्रकृति इसकी है
नही समझती कोई वात,
काम एक भी नही करेगी
दिये बिना मन को आघात।" ।१३।

"वातो मे है भरा हलाहल
चाल-ढाल है काल समान,
सहज भाव से रोषमयी है
परम विषले व्याल समान।
भली वात भी कहना उसमे
सकट ही लेना है मोल,
तोल तोल के बोलो तो भी
द्वार कलह का देती खोल।" ।१४।

"कुर्सी मेज़ साथ लायी है
बड़े ठाट से पढ़ती है।
भोजन मिले न ठीक समय पर
तो लड़ने को बढ़ती है
प्रेमपत्र लिखना औरों को
उपन्यास पढ़ना है काम।
समझा करती गायत्री को
चाकरनी अपनी बेदाम।" ।१५।

भिन्न भिन्न लोगों की बातें
चलती रहती इसी प्रकार।
किन्तु न बता सका कोई भी
कैसे हो इसका उपचार।
कहा एक ने तब विचार कर
देवी की पूजा की जाय
दुर्गा-स्तोत्र - पाठ हो विधिवत्
और मानता मानी जाय।१६।

विमला के मायके गमन से
पति कुसुमाकर को था तोष,
मुग्ध मधुप की भांति हुआ वह
बद कम अम्बुज के कोष।
अमित पीड़ितों की सेवा में
विविध ग्राम कार्यों म योग—
देकर जो बहलाता था वह
हलका कर निज पीड़ा-रोग।१७।

किन्तु बादलों मे ज्यों विजली
कभी कभी है कढ पडती।
मुग्धा के चचल लोचन को
चौकाने ही को ग्रडती।
उसी भाति जब तब विमला की
याद उसे ग्रा जाती थी।
चचल बाला सी वह हँसती
अपनी झलक दिखाती थी।१८।

खिच जाते थे उन दिवसो के
फिर वे चित्र सरसता-धाम,
पहले पहल पधारे थे जब
गृह म विमला-चरण ललाम।
कैसी स्फूर्ति मजु तन म थी !
थी माना चचलता मूर्ति,
चपला सी चमका करती थी
करने को कार्यों की पूर्ति।१९।

श्याम घटा सी काली ग्रलके
रस बरसाती थी अविराम,
भाल शैल पर पवन प्रताडित
विचरा करती थी छविधाम।
ग्रांखो के ग्रलवेलेपन पर
मृगी निछावर होती थी।
मुख की चारु गुराई लखकर
चन्द्रकला तो रोती थी।२०।

यही सोचता सध्या को वह
गया एक दिन यमुना-कूल,
भूल स्वय को लगा देखने
लता अर्क-विकसित नव फूल।
प्रणयी मधुकर के स्वागत हित
डोल रहा था वह सामोद,
ज्यो पलने मे भूल रहा हो
मजुल बालक भरा विनोद।२१।

डूब गया विचार-सागर मे
कितना है आनद अगाध !
हाय मानवो का भी ऐसा
हो न सका क्यो स्नेह अबाध ?
विडम्बना कितनी है जग मे
देख देख मै हूँ हैरान,
जड भी जहाँ स्वतन्त्र वहीं हम
क्यो परतन्त्र हुए भगवान् ?।२२।

जीवन की उमग सब के ही
मानस में देखो न्यारी,
आशाओ की तुग तुरगे
लहराती विमुग्धकारी।
दिन भर रह एकान्तसविनी
रजनी ने गूथी माला,
प्रिय शशाक के कलित कठ मे
अवसर पा सप्रेम डाला।२३।

चारु चन्द्रिका के प्रकाश में
कल्लोलों की कल क्रीडा—
सब को प्रसन्नता देती नव
देती किन्तु मुझे पीडा।
इन्हीं भावनाओं में डूबा
पड़ा रहा वह थोडी देर,
निद्रा देवी ने तब क्रमश
लिया शिला पर उसको घेर।२४।

स्वप्न जात अनुरंजित जग मे
दीखा विस्मयकारक रूप—
माँ परिणत गायत्री छवि मे
दया बनी बिमला अनुरूप।
गद्गद् हृदय हो गया उसका
तनु मे पुलकावलि छायी।
आनन्दाश्रु धार नयनों से
मुख-मण्डल पर ढल आयी।२५।

अहो! विधाता परम असम्भव—
भी यह क्या सभव होगा?
प्राची म क्या विलय तरणि का
पश्चिम मे या उद्भव होगा?
परम कठिन मरुभूमि-मध्य क्या
निकलेगी जल की धारा?
क्या बबूल तरु मे आवेगा
फल रसाल मीठा प्यारा?।२६।

ध्यान गया कुसुमाकर का सब
पंक और पंकज की ओर ।
सुधि आयी पाषाण-हृदय से
करुण कंठ लिये रव घोर ।
मलिन तल से ज्योति सुनिर्मल
निकली—आया उसको याद ।
संभावना नयी बातों की
लायी मानस में आह्लाद ।२७।

प्रसन्नता की बाढ़ आ गयी
सका न अपना हृदय सँभाल,
देख परम एकान्त वहाँ पर
उठा नाच सा वह तत्काल ।
स्वप्नलोक के आन्दोलन का
उसके तनु पर पड़ा प्रभाव,
बचा शिला से गिरते गिरते,
आँखें खुलीं मिटा सब भाव ।२८।

सबल यथार्थ परिस्थितियाँ फिर
दिखीं सामने विकटाकार ।
सोचा उसने—अधिक समय तक
टिका न क्यों यह सुख आधार ?
दुर्लभ अमृत पान करता था
क्यों न हाय करने पाया ।
अमर लोक में जाकर भी क्यों
ठहर न वहाँ सकने पाया ।२९।

चारु चन्द्रिका के प्रकाश में
कल्लोलों की कल क्रीडा—
सब को प्रसन्नता देती नव
देती किन्तु मुझे पीडा।
इन्हीं भावनाओं म डूबा
पडा रहा वह थोडी देर,
निद्रा देवी ने तब क्रमश
लिया शिला पर उसको घेर।२४।

स्वप्न जात अनुरंजित जग मे
दीखा विस्मयकारक रूप—
माँ परिणत गायत्री छवि मे
दया बनी बिमला अनुरूप।
गद्गद् हृदय हो गया उसका
तनु मे पुलकावलि छायी।
आनन्दाश्रु धार नयनो से
मुख मण्डल पर ढल आयी।२५।

अहो! विधाता परम असम्भव——
भी यह क्या सभव होगा?
प्राची में क्या विलय तरणि का
पश्चिम म या उद्भव होगा?
परम कठिन मरुभूमि-मध्य क्या
निकलेगी जल की धारा?
क्या बबूल तरु म आवेगा
फल रसाल मीठा प्यारा?।२६।

ध्यान गया कुसुमाकर का तब
पक ओर पंकज की ओर ।
सुधि आयी पाषाण-हृदय से
झरन कढ़ लिये रव घोर ।
मलिन तन से ज्योति सुनिर्मल
निकली—आया उसको याद ।
सम्भावना सभी बातों की
लाया मानस में आह्लाद ।२७।
प्रसन्नता की बाढ़ आ गयी
सका न अपना हृदय सँभाल,
देख परम एकान्त वहां पर
उठा नाच सा वह तत्काल ।
स्वप्नलोक के आन्दोलन का
उसके तनु पर पड़ा प्रभाव,
वचा शिला से गिरते गिरते,
आखें मुंदीं मिटा सब भाव ।२८।
सकल यथार्थ परिस्थितियां फिर
दिखीं सामने विकटाकार ।
लगा उसे—अचिर समय तक
[illegible] न क्यों वह सुन्द-आधार
[illegible] मधु-पान करता था
क्यों न हाथ करते [illegible]
[illegible] में जाकर भी क्यों
[illegible] । यहाँ मरते [illegible]

वडी देर तक हाथ मीजता—
रहा शिला पर वह आसीन,
किंकर्त्तव्यविमूढ भावना
बना रही थी उसको दीन ।
कैसे, क्या करना होगा अव
सोचा उसने वारम्बार ।
अधकार ही अधकार बस
दिखा चतुर्दिक घिरा अपार ।३०।

चारु चद्रिका के विकास म
यमुना का वह लहाराना,
कुसुमाकर को लगा न रुचिकर
पपिहा का पी पी गाना ।
उठा वहाँ से, घर को आया
अन्यमनस्क भाव म मग्न ।
नाम मात्र को भोजन करके
लेटा चिन्ता से हो भग्न ।३१।

पंचम सर्ग

निद्रा का चिंतित आवाहन
कुसुमाकर कर कर हारा।
किन्तु न उसको करुणा आयी
धैर्य लगा मिटने सारा।
इस अधैर्य ने चरम प्रगति कर
भेंट क्लान्ति से करवायी।
विवश बनी तब निद्रादेवी
चली मंद गति से आयी।१।

निद्रा के द्वारा कुसुमाकर—
ने पाया फिर स्वप्न प्रवेश।
वेला वही, वही ज्योत्स्ना स
लहरित यमुना सरस विशेष।
उसी शिला पर बठे बैठे
यमुना से उसका संवाद—
चला भाव-सिक्ता वाणी में
नभ ने श्रवण किया सविषाद—।२।

बडी देर तक हाथ मीजता—
रहा शिला पर वह आसीन,
किंकर्त्तव्यविमूढ भावना
बना रही थी उसको दीन।
कैसे, क्या करना होगा अब
सोचा उसने बारम्बार।
अधकार ही अधकार बस
दिखा चतुर्दिक घिरा अपार।३०।

चारु चद्रिका के विकास मे
यमुना का वह लहाराना,
कुसुमाकर को लगा न रुचिकर
पपिहा का पी पी गाना।
उठा वहाँ से, घर को आया
अन्यमनस्क भाव म मग्न।
नाम मात्र को भोजन करके
लेटा चिन्ता से हो भग्न।३१।

पंचम सर्ग

निद्रा का चिंतित आवाहन
कुसुमाकर कर कर हारा ।
किंतु न उसको करुणा आयी
धैर्य लगा मिटने सारा ।
इस अधैर्य ने चरम प्रगति कर
भेंट क्लान्ति से करवायी ।
विवश बनी तब निद्रादेवी
चली मंद गति से आयी ।१।

निद्रा के द्वारा कुसुमाकर—
ने पाया फिर स्वप्न प्रवेश ।
वेला वही, वही ज्योत्स्ना में
लहरित यमुना सरस विशेष ।
उसी शिला पर बैठे बैठे
यमुना से उसका संवाद—
चला भाव-सिक्ता वाणी में
नभ ने श्रवण किया सविषाद—।२।

कुसुमाकर के आगे यमुना
　　श्याम अगना सी आयी ।
आतुर लहरो काज सान्त्वना
　　की शीतल वाणी लायी ।
वैसी ही चचलता उसमे
　　वसा ही मुसकाना भी,
वैसे ही रसिका को आहत—
　　कर निज चरण बढाना भी ।३।

ताराओ से मौक्तिक गहने
　　वैसे ही तन म धारे,
खेल कलाधर से कदुक सँग
　　वैसे ही करते प्यारे ।
कुसुमाकर बोला—"अयि यमुने !
　　तेरा यह आमोद अनत—
वता रहा है तेरे जीवन—
　　मे रहता चिरकाल वसत ।" ।४।

"उठा उठा उत्ताल तरग
　　मौज भरी अँठिलाती तू ।
टीले और कगारे तट के
　　तोड नाचती जाती तू ।
सुन तो मेरी करुण कहानी
　　नेक विरत हो क्रीडा मे ।
मैं अधीर होता जाता हूँ
　　असहनीय निज पीडा से ।५।

परम विदग्धा मेरी कान्ता
काव्य-कला अनुरागमयी,
रूप-कुंज की मंजु कली सी
प्रिय आनन्द-परागमयी।
ललित प्रणय की क्रीडा स्थल सी
सहृदयता की मूर्त्ति ललाम।
जिसके मानस के मराल प्रिय
करुणा, शील, विनय अभिराम।६।

फुल्ल कुसुम को देख दया कर
कभी नहीं मुसकाती जो,
करुणा मूर्त्ति मृगी नयनों से
कभी न नयन मिलाती जो,
श्याम मेघ को, अलिमाला को
भावों में डूबा अवलोक,
जिसने रक्खी प्यारी अलकें
शीश वसन के भीतर रोक।७।

पाती नहीं व्यथित लतिका जब
ग्रीष्म काल में नीरद नीर,
जिसके लोचन के जल से ही
खोती निज तन-मन की पीर।
बच्चे पाल खगों के प्यारे
प्यार अपार बढ़ाती जो,
तोता, मैना की भी माता
प्रेममयी कहलाती जो—।८।

उमड़ा कहीं विलोया हो तो
यमुने कुछ बतलाओ हाल,
हे उदार-हृदये ! दिखलाओ
मुझको अपना हृदय विशाल।
कहीं उसे देखा होगा तो
हार दिया होगा निज मन,
उसकी मजु सरलता द्वारा
खोया होगा अपनापन।९।

चचल लहर अचचल होकर
बडी देर विरमी होगी,
परम लडैते चरणों मे भी
बेडी सी पड़नी होगी।
आह ! कलिंद-कुमारि ! तुम्हारा
यह निर्मोहीपन कैसा !
किये जा रही हो मेरा दुख
सुना अनसुन के ऐसा।१०।

अब तक मैं जानता यही था
गात तुम्हारा है काला,
देख रहा हूँ किन्तु आज मन
भी है वह दोषा वाला।
अरी भानुकुल की कन्या हो
सहृदयता कुछ दिखलाओ।
बडे बाप की बेटी हो तुम
क्षुद्र न ऐसी हो जाओ।११।

जाओ, जाओ, क्यो मानोगी
भाग्यहीन हूँ मै भारी,
हाय कुल्हाडी मैंने ही तो
अपने पैरो मे मारी।
शान्त भाव से समझाकर क्या
मा को मना न मैं पाता ?
प्राणवल्लभा - विकट यातना—
बल क्या क्षीण न हो जाता ? ।१२।

वे पतवार नाव सी मा को
क्यो सागर मे छोड दिया ?
मनमाना बहने देने को
क्यो उससे मुंह मोड लिया ?
सत्य धर्म विपरीत आचरण
गुरजन का होवे जिस काल
क्या छोटो का धर्म नही यह
भक्ति सहित दें उन्हे सँभाल ?।१३।

हाय परीक्षा ही मैं करता—
रहा सुशीला नारी की,
उसको नेक न दिया सहारा
भूल भयकर भारी की।
ज्यो ज्यो क्लेश उसे मिलता था
पाता था सौन्दर्य निखार
तन लटता था, किन्तु हृदय की
छवि दिखती थी अति सुकुमार।१४।

हाय भानुनंदिनि ! निरमोहिनि
व्यर्थ तुम्हे कहता हूँ मै,
निरमोहीपन की धारा मे
भूर स्वय बहता हूँ मैं।
फिर भी तनिक दया कर विरमो,
मुझमे दो बातें कर लो,
मेरी परम प्रखर पीडा की
निदयता थोडी हर लो।१५।

मृदुल वायु है साथ तुम्हारे
मीठे स्वर मे गाती हो,
तट-तरुग्रो से करती खेला
तुम ग्रँठलाती जाती हो।
भला सुनोगी क्यो मेरा दुख
तुम कुमारिका हो ग्रलमस्त,
ग्रभी हृदय का फूल तुम्हारा
नही प्रणय कीटा से व्यस्त।१६।

माना होकर कुमारिका तुम
मेरा क्लेश न सकती जान,
फिर भी दो मीठी बातो से
क्यो न मोहती मेरा कान ?
यदि उपकार-भाव से यमना
तुम्ह नही भाता सुकुमारि !
तो मुझमे कुछ सीख सकोगी
यही सोच कर रुको कुमारि !।१७।

यमुना बोली मधुर स्वरो मे—
मै तो हूँ सरला बाला,
सहज भाव से सतत गूथती—
हूँ निज कृत्यो की माला ।
टीलो और कगारो का यह
निज करते रहना सहार—
प्रिय है नही, किन्तु करती हूँ
निज अप्रिय कर्त्तव्य विचार ।१८।

निज हृदय स्थित के दर्शन हित
स्वीय सदयता खोती हूँ ।
विघ्न डालनेवालो की मैं
सर्वनाशिनी होती हूँ ।
प्राणो से प्यारे पावस को
ढूढ रही हूँ मै अविराम,
उनके बिना न शान्ति कही है
कही न जीवन मे विश्राम ।१९।

परित्याग कर दिया पिता का
त्यागी प्रेममयी माता,
पावस से जब मुझे विलग कर
वे हो गये क्लेशदाता ।
गर्व जाति का, गौरव कुल का
मेरे हित निस्सार बना ।
प्राणाधार-मिलन में जब वह
बाधा का आगार बना ।२०।

जिसे हृदय से चाहा मैंने
जिस पर निज तन मन वारा,
सरस स्वप्न की भांति प्राण मे
रूप रमा जिसका प्यारा।
बन उसकी सेविका जगत मे
बंधन कौन भला मानू ?
आठो याम कान्त-निरता हूँ
अन्य कार्य मैं क्या जानू ! ।२१।

कुसुमाकर ने कहा, "तुम्हारी
बातें यमुने बडी विचित्र,
अंगीकार मुझे भी है यह—
मार्ग प्रणय का परम पवित्र।
किन्तु जनक-जननी आज्ञा का
इस प्रकार करना अपमान—
किस मुख की लालिमा रखेगा,
किसे करेगा शोभादान ? ।२२।

किसी देवबाला के मुख से
ऐसी बात कढेगी क्यो ?
कुल गौरव-विनाश-सीढी पर
वह सानद चढेगी क्यो ?
स्वीय वासना के अधीन हो
बनी स्वतन्त्रा जब नारी,
कीर्त्ति गयी, कल्याण गया सब
आयी विडम्बना सारी ।२३।

इस प्रकार की प्रमदाओं को
औरों का कैसे हो ध्यान ?
मधु-लोलुप भ्रमरी सी हैं वे
प्रिय है अपना ही मधुपान।"
कुसुमाकर-अभियोग श्रवण कर
रवि कुमारिका यों बोली,
स्वर के कोमल कलित कम्प में
मानो हो मिसरी घोली।२४।

मेरी प्रेम-कथा रहस्यमय
अब तक तुमको ज्ञात नहीं,
क्षोभकरी इससे मुझको है
विरस तुम्हारी बात नहीं।
सभी प्रेम-प्रार्थी थे मेरे
शरद, शिशिर, हेमन्त, वसंत,
उन्हें न मैंने हृदय दिया निज
यद्यपि थे छवि भरे अनंत।२५।

कृपापात्र मेरे गुरुजन के
ग्रीष्मदेव का रूप ललाम,
हिमप्रदेश की किस कुमारिका
को कर देगा नहीं सकाम ?
किन्तु रूप सहृदयता-विरहित
मैंने कभी न प्यार किया।
देख हृदय काले पावस का
अपने को बलिहार दिया।२६।

जो दुर्भिक्ष-व्यथित कृपका के
जीवन को सरसा देता,
कृपक कुमारी मानस मे जो
रस-धारा वरसा देता ।
फूलों और लताओं मे जो
भर देता नव हरियाली,
जिसके उपकारों से नत सब
तरुओं की डाली, डाली ।२७।

ऊँच नीच का भेद न करके
सब की सेवा करता जो,
अनुकरणीय उदार भाव से
उदर सभी का भरता जो,
जिसका एक मात्र जीवन-व्रत
है करना जग का कल्याण,
उसकी शरण न क्यों जाती मैं
पाने को क्लेशो से त्राण ।२८।

जहाँ कही सौन्दर्य मिलेगा
वहीं चली जाऊँगी मैं,
प्रणय-भाव के प्रवल वेग से
बाधा बिसराऊँगी मैं ।
फिर जिसमे सौन्दर्य-राशि है
उसकी तो मैं चेरी हूँ ।
गाती उसका गान लगाती
फिरती जग में फेरी हूँ ।२९।

छोटे से विघ्नो की क्या है
विश्व-नियता भी थहरायें,
क्या मजाल है, अधिक काल लौ
विपदा के बादल घहरायें।
मेरी इच्छा चली जिधर को
मार्ग उधर हो जायेगा,
सकट का सम्राट असशय
दब के शीस नवायेगा।३०।

यह दाहक विषाद की ज्वाला
तुम्हे जला ही डालेगी,
यो ही पडे रहोगे तो यह
हृदय तुम्हारा घालेगी।
जिन आहो से स्वय जलोगे
उनसे विघ्न जला डालो,
हे प्रेमिक ! अनुसरण करो मम
धर्म प्रणय का प्रतिपालो।३१।

क्षुद्र नीति के काटे उभडे
कुचलो इनका मुख सत्वर।
चलो महासागर-तरगवत्
गजन करते प्रणयि प्रवर !"
कालिंदी की इन बातो ने
कुसुमाकर को भ्रान्त किया,
मेरा है कर्त्तव्य कौन सा ?—
इसी प्रश्न ने क्लान्त किया।३२।

परम अयशकारक था वह पथ
था जिस ओर प्रणय-आदेश,
किंतु सहन भी हो न रहा था
पीडित मन का दारुण क्लेश ।
इतने ही मे निद्रा टूटी
सरस स्वप्न को मिला विराम,
कही न था यमुना का कल स्वर
कही न उसका तट छविधाम ।३३।

षष्ठ सर्ग

उषा काल के आते ही ज्यो
कुमोदिनी कुम्हला जाती,
पूछ न ताराओ की होती
ऐंठ दीप की सकुचाती
सिंहप्रिया को ज्यो विलोक कर
शृगालिनी अति भय खाती
रजनी का कालापन लख कर
ज्यो अलिमाला घबराती ।१।

राधा की हो गयी अवस्था
परम विवशतामयी वही,
लज्जित, चकित, विनत अब थी वह
जितनी ही कर्कशा रही ।
बोल नही मुख से कढता था
विचारती थी आठो याम,
ऐसी बहू हमारी होती
तो क्या गति होती हे राम ! ।२।

एक दिवस वह लगी सोचने
विमला का अति सीधापन,
तुलना दयावती से करने—
लगी बैठ के मन ही मन।
इस थोडी सी चिन्ता का फल
धारण कर के अश्रु - स्वरूप,
आखो के मग से कढ निकला
दृश्य हो गया परम अनूप ।३।

उसी दिवस दुर्गादेवी से
क्षमा कराने को अपराध,
चली गयी वह नीरस मन मे
भर कर श्रद्धा भक्ति अगाध ।
वहाँ व्यास जी पाठ सग ही
टिप्पणियाँ भी करते थे ।
उदाहरण घर घर के देकर
हृदय सभी का हरते थे ।४।

नारी जननी अखिल विश्व की
जन पोषण करनेवाली,
सेवा से परितप्त जगत की
व्याकुलता हरनेवाली ।
नारी से ही स्वग यहा है
नारी से कल्याण यहा ।
नारी से विश्राम पुरुष के
पाते रहते प्राण यहाँ ।५।

जो नारी - अपमान करेगा
क्यों न दण्ड वह पावेगा ।
अपने कर से मार कुल्हाडी—
पावों म पछतावेगा ।
अपमानिता, दु खिनी नारी—
के दुख से व्याकुल भगवान—
पाखडिनी मेम की रचना
करने लगे प्रपच - निधान ।६।

वैवाहिक बधन की रचक
पवित्रता न जहा है शेप,
कुमारिकाओं की सलज्जता
मरी लजा के जहाँ विशेप ।
जहाँ त्याग आदश नही है
बढी भोग की माया है,
पशुता ही का विभव सभ्यता—
मे सब ओर समाया है ।७।

अनतिकाल में दोप वहाँ के
गुण समान आदर पाकर,
पूजनीय होग भारत में
विपम सकटो के आकर ।
सारी उन्नति की बाधक है
सारे पापो की है खान,
नारी का जो करे अनादर
वह मति है शूकरी समान ।८।

एक दिवस वह लगी सोचने
विमला का अति सीधापन,
तुलना दयावती से करने—
लगी बैठ के मन ही मन।
इस थोडी सी चिन्ता का फल
धारण कर के अश्रु - स्वरूप,
आँखो के मग से कढ निकला
दृश्य हो गया परम अनूप ।३।

उसी दिवस दुर्गादेवी से
क्षमा कराने को अपराध,
चली गयी वह नीरस मन मे
भर कर श्रद्धा भक्ति अगाध ।
वहा व्यास जी पाठ सग ही
टिप्पणिया भी करते थे ।
उदाहरण घर घर के देकर
हृदय सभी का हरते थे ।४।

नारी जननी अखिल विश्व की
जन-पोषण करनेवाली,
सेवा से परितप्त जगत की
व्याकुलता हरनेवाली ।
नारी से ही स्वर्ग यहाँ है
नारी से कल्याण यहाँ ।
नारी से विश्राम पुरुष के
पाते रहते प्राण - ।५।

जो नारी - अपमान करेगा
क्यों न दण्ड वह पावेगा ।
अपने कर से मार कुल्हाडी—
पावों मे पछतावेगा ।
अपमानिता, दु खिनी नारी—
के दुख से व्याकुल भगवान—
पाखडिनी मेम की रचना
करने लगे प्रपच - निधान ।६।

वैवाहिक बधन की रचक
पवित्रता न जहा है शेष,
कुमारिकाओ की सलज्जता
मरी लजा के जहाँ विशेष ।
जहा त्याग आदर्श नही है
बढी भोग की माया है,
पशुता ही का विभव सभ्यता—
में सब ओर समाया है ।७।

अनतिकाल मे दोष वहा के
गुण समान आदर पाकर,
पूजनीय होग भारत मे
विषम सकटों के आकर ।
सारी उन्नति की बाधक है
सारे पापो की है खान,
नारी का जो करे अनादर
वह मति है शूकरी समान ।८।

नारी को अपशब्द कहे जो
अयश-बेलि उसने बोयी ।
नारी का सतप्न करे जो
उमस अधम नही कोई ।
दीना अबला की आँखो के
आसू मे है बल इतना,
सागर की प्रचण्ड आदोलित
लहरो मे होता जितना ।९।

नारी ही नारी को डाहे
विडम्बना यह है भारी,
समझे मास बहू को
अपना शत्रु, नही बेटी प्यारी ।
यह अनान हमारे गृह में
पैठ गया है अनजाने,
हो निश्चिन्त किया करता है
अनाचार नित मनमाने ।१०।

सोचो तो कौशल्या रानी
जनक कुमारी की थी सास,
कितना लाड प्यार करती थी
देख देख होती मोल्लास ।
इसी भाँति समझा समझा कर
दिये व्यास जी ने उपदेश,
शान्तिमयी वाणी में बोले
राधा पर कर लक्ष्य विशेष ।११।

दूब जमी पाषाण शिला पर
मरुस्थली मे लता लगी ।
उषा हँसी पश्चिम मे मानो
राधा की वर बुद्धि जगी ।
घर आ उसने सोचा मन मे
हाय अनर्थ किये मैंने,
देवी सी विमला को नाहक
क्लेश अपार दिये मैंने ।१२।

सच्ची बात जान पड़ती है
स्पष्ट देखना हैं सारे ।
जब से विमला गयी, नाक मे
दम है रोगो के मारे ।
खेती म न प्राप्ति होती है
वृद्धि न होती उद्यम में,
दोनो भैया कमी न करते
यद्यपि कभी परिश्रम मे ।१३।

स्वप्न अनेक देखती हूँ नित
जिनमे विकरालता भरी,
रात रात उलझी रहती हूँ
प्राण - दण्डिता - सदृश डरी ।
नही पौत्र का भी मुख देखा
इन पापो ही के कारण ?
मेरे अघ - तरु में होगा क्या
वंश-हानि-फल भी धारण ? ।१४।

दुर्गा देवि ! दोष है मेरा
क्षमा करो अपराधो को।
दो आशीश पूर्णता होवे
प्राप्त हृदय की साधो को।
शकर की जननी गायत्री
इसी समय औचक आयी,
राधा के चरणो में सिर रख
आँखो मे आसू लायी।१५।

बोली कातर स्वर मे विनती,
बहिन ! एक कर लो स्वीकार,
विमला को शीघ्र ही मँगाओ
करो प्रेममय प्रिय व्यवहार।
बडे भाग्य से तुम्हे मिली है
रानी सी वह वधू प्रवीण,
मेरी तो बूझी न नाथ ने
रखा जन्म भर शान्ति विहीन।१६।

जो न रिसाओ एक बात मैं
तुमसे कहूँ बहिन प्यारी !
दुर्गा की कोपानल - ज्वाला
होगी अति अनर्थकारी।
मेरा क्या, मैं पडोसिनी हूँ
तुम हो मेरी सखी समान,
मैं तुमको कुछ कह न मकूगी
यद्यपि हो अपकार महान।१७।

देवी के इस महारोष का
कारण तुमको बतलाते,
तुम्हे देख कर ग्रामनिवासी
क्रोध मग्न सब हो जाते।
सोच रहे हैं अब वे तुमको
शीघ्र ग्राम के बाहर कर,
देवी को सन्तुष्ट करेंगे
ढूढ रहे है बस अवसर ।१८।

आपे मे न रही अब राधा
तडपी उत्तेजन पाकर,
ज्यो सोती सिहिनी उठी हो
अरि से ललकारी जाकर।
रक्त वर्ण हो गये विलोचन
लगे बरसने अगारे।
अधर फडकने लगे विकृत हो
कम्पित अग हुए सारे ।१९।

बोली बडे प्रचड स्वरो मे—
"अभागिनी क्या कहती है!
राधा नही किसी की आश्रित—
हो इस पुर मे रहती है।
किसकी है मजाल जो मुझको
दे निकाल मेरे घर से,
एक बार घनघोर युद्ध तो
कर लू यम के अनुचर से ।२०।

राधा का विकराल रूप लख
शंकर की माँ चली गयी।
डरती गयी हृदय में, कोई
आवेगी आपत्ति नयी।
वह तो गयी किन्तु राधा के—
मानस ने न शान्ति पायी,
इसीलिए उसके घर पर जा
प्रलय मेघ सी घहरायी।२१।

जितना ही सरला गायत्री
पीछे पांव हटाती थी
कलह - लालसा भी राधा की
उतनी ही अधिकाती थी।
राधा तड़पी, झड़पी, गरजी
हयोड़िया घटना बोली।
उछल उछल कर भरी उमंगा
मुंह मटका मटका बोली।२२।

धीरे धीरे शोर हो गया
चारों ओर ग्राम भीतर।
महिलाएँ एकत्र हो गयी
कितनी ही शंकर के घर।
राधा के गर्जन - तर्जन का
अभी नहीं हो पाता अन्त।
घटना एक न जो घट जाती
बड़ी भीतिकारक अत्यन्त।२३।

एकाएक एक वृद्धा पर
आया दुर्गा का आवेश।
देवी बोली—अभी मिलेंगे
दिन दिन सब को भारी क्लेश।
बकरो का बलिदान तो मिला
किन्तु इष्ट है जो बलिदान,
उसे नही अब तक पाया है
बढती जाती भूख महान।२४।

वृद्धा-तन झकझोर जोर से
जगदम्बा ने यह भाखा—
रक्त मधुर राधा के उर का
अभी नहीं मैंने चाखा।
एक कटोरा रक्त मुझे दो
राधा के उर का सब लोग,
बदले में मैं दूगी तुमको
सासारिक विभवो का भोग।२५।

अथवा परम दुखिनी विमला
को तुरन्त पुर में लाओ,
अत्याचार न होवे उस पर
उसके मन को हुलसाओ।
उसके सुख से सुख पाकर के
मेरी प्यास बुझायेगी।
फिर कोई उत्पात-उपद्रव
इस पुर मे न मचायेगी।२६।

दो मे से यदि एक बात भी
　　की न गयी तो सच जानो,
परम प्रचड रोष को मेरे
　　सवनाशकारी　　मानो।"
कह कर यहो जननि जगदम्बा।
　　चली गयी अपने श्रीधाम।
राधा को अब सकल नारियाँ
　　सीख लगी देने अभिराम।२७।

राधा की बोलती वद थी
　　किंकत्तव्य - विमूढा　　थी।
बिमला को जो वह न मँगाये
　　तो आपदा अगूटा थी।
अपनी धाक रहे फिर कैसे
　　इसकी चिन्ता थी भारी।
बोल पडी तपाक से कर के
　　मन ही मन सब तयारी—।२८।

"मेरी वहू मुझे प्रिय जितनी
　　उतनी तुम्ह नही होगी।
ऊषा को कुमोदिनी से भी
　　समवेदना कही होगी।
विभ्रम करे भले हो ज्योत्स्ना
　　ताराओं की ज्योति ललाम,
किन्तु काम शशि का रक्षण है
　　भक्षण है दिनकर का काम।२९।

"अपनी बहू मँगाऊँगी मैं
भैया लाने जायेंगे ।
मेरे घर मे घिरी अँधेरी
ज्योति शीघ्र ही लायेंगे ।"
यह कह कर तुरत ही राधा
अपने गेह चली आयी,
आज कलेजे पर अपने सौ—
मन का बोझा सा लायी ।३०।

अपराजिता रही जो सब दिन
नीचा देख लिया उसने ।
बडी देर लौ पडी खाट मे
आहे भरा किया उसने ।
असहनीय आघात – विषमता
जब किंचित् सहनीय बनी,
मँझले बेटे के समीप वह
गयी बडी दयनीय बनी ।३१।

कुसुमाकर ने देख अम्ब को
उठ कर विनत प्रणाम किया,
आसन दे, मीठी बात कह
मानस को विश्राम दिया ।
"घर का कोई काम आ पडा
जिससे यहा पधारी मा,
या यो ही दर्शन देने को
आयी मम दुखहारी माँ ।३२।

अम्मा, जो आज्ञा हो कह दे
कार्य शीघ्र कर डालूं मैं।
यदि कोई बाधा आयी हो
उसको सत्वर टालूं मैं।"
राधा के सब पूर्व पुण्य का
फल-स्वरूप सुत यों कहकर,
बैठा रहा शान्त मुद्रा से
दृष्टि रखे मां के मुख पर।३३।

बोली राधा—"बहू लिवाने
जाना होगा बेटा, आज।
उसके बिना गृहस्थी के अब
बिगड रहे हैं सारे काज।
ज्ञात न थे उसके गुण तब लों
जब लों थी पास ही यहां,
सुलभ वस्तुओं की विशेषता
का आदर हो सका कहां ?।३४।

देखी है स्वर्गीय गुणों का
डेरा उसे कहूंगी मैं,
कुल के सब पुण्यों का दिव्य—
बसेरा उसे कहूंगी मैं।
अंधकार है मेरे गृह में
उस लक्ष्मी को ले आओ,
चमके मणि की भांति भवन में
भाग्य सभी का चमकाओ।" ।३५।

आज्ञा कर के श्रवण जननि की
कुसुमाकर को था सतोष ।
किन्तु अचम्भा यह भारी था
कैसे मिटा अनोखा रोप ।
सृष्टि - नियन्ता को मन ही मन
नमस्कार कर वारम्वार,
चमत्कारमय उसकी लीला—
पर हो कर के मुग्ध अपार ।३६।

कुसुमाकर ने कहा जननि से—
"माँ, मुझको मत दे यह काम,
राह नही जानी है मेरी
पाऊँगा न श्वसुर का धाम ।
छोटे कई बार हो आया
भेज उसे ही हे माता ।
यात्रा म आनद निराला
है सदैव उसको आता ।३७।

जब लौं छोटे लौट न आवे
घर के काम सँभालूँगा ।
क्लेश न होने दूगा तुझको
आज्ञा तेरी पालूँगा ।"
किन्तु कहा राधा ने, "बेटा,
तुमको ही जाना होगा ।
दृढ श्वसुर का गेह तुम्हीं को
विमला को लाना होगा ।३८।

जो कुछ चूक हुई है मुझसे
वह सब भुलवाना होगा,
ऐसी बात नही होगी फिर
उनको समझाना होगा ।"
'जो आज्ञा'–कहकर कुसुमाकर
उठा स्वआसन से सत्वर ।
सकल व्यवस्था कर कुटिया की
चला वसन वर धारण कर ।३९।

जो म जो आया राधा के
वेचैनी भागी सारी ।
बोल उठी मन म सब को यो
तनय मिलें आज्ञाकारी ।
आखो से ओझल न हो गया
कुसुमाकर जब तक चल कर ।
दृष्टि गडाये रखी निरतर
राधा ने तब तक उस पर ।४०।

सप्तम सर्ग

(ललित पद)

दिवस और रजनी का मिलना
कैसे फिर हो पाता ?
संध्या को यदि सदय हृदय हो
नहीं भेजता धाता ।
विकल मधुपमाला मिस मंजुल
केशों को छिटकाये,
अरुण कपोलों पर विषाद का
मंद बिम्ब प्रगटाये—।१।

वह सब दिन ही भोग-त्याग का
सामंजस्य सिखाती ।
कृपामयी कड़वी औषधि भी
प्रेम - समेत पिलाती ।
व्याज खगों के मंजुभाषिणी
निरता पर उपकारे,
संध्या ने कब, कहाँ न किसके
हित के काज सँवारे ? ।२।

अन्यमनस्क बनी विमला थी
एक कुंज में बैठी,
भ्रमरों का नैराश्य देखती
विरह - सिंधु में पैठी ।
कभी गुलाब कुसुम के कांटे
देख सहम जाती थी,
मधु लोलुपता विकल मधुप की
लखकर घबराती थी ।३।

पीत वर्ण चम्पा का लख के
कभी व्यथित होती थी,
कभी उसी की परम व्यथा से
स्वीय व्यथा खोती थी ।
उसे अरुचिकारक लगता था
मारुत का इतराना,
छेड़ छेड़ कोमल कुसुमों को
पखड़ियाँ छितराना ।४।

लगे निकलने तारे नभ में
चारु चंद्रिका फैली,
प्रकृति - वदन की निखरी शोभा
हुई और ही शैली ।
अनुपम छवि लख बोल उठी यों
विमला जग से ऊबी,
करुणा निधि क्या पड़ी रहूँगी
मैं यों ही दुख डूबी ? ।५।

कुमुद बंधु का उदय देख ज्यों
कुमुद-कली हँस पड़ती,
रजनी के मुख पर प्रमोद की
जैसे राशि उमड़ती,
वैसे ही मुझ अभागिनी के
जीवन में भी प्यारा,
दिन कब वह आवेगा मेरा
क्लेश कटेगा सारा ।६।

हृदय देव के सौम्य शान्त मुख—
की छवि कब देखूंगी ?
कब सेवा का अवसर पाकर
जन्म सफल लेखूंगी ?
इसी समय घन तिमिर-राशि में
सरल उषा की स्मृति सा
मिलने से त्रिभुवन का वैभव
निधन तनु विस्मृति सा ।७।

प्रियतम के पधारने
संदेश प्राणप्रिय पाया ।
शंका से पीड़ित मन में
विश्वास, परन्तु न आया ।
मेरा प्रबल अभाग्य पराजय
किस प्रकार मानेगा ?
मेरे जीवन के मरुथल में
क्यों रस आने देगा ? ।८।

(हरिपद छंद)

संशय से प्रताड़िता होकर
सोचे अमित उपाय,
किसी भाँति प्रिय के आने का
सत्य वृत्त मिल जाय।
लज्जा किंतु परम बाधक थी
किससे कहती हाय,
यहाँ वहाँ घर के भीतर ही
डोली वह असहाय ।६।
ज्यों रसाल तरु ओर निरखता
घन से घिरा मयंक,
देखा कहीं अटा पर जाकर
प्रिय की ओर सशंक।
जो सुख उसे मिला वह किसके—
द्वारा वर्णित होगा ?
स्वयं शारदा थक जावेगी
शेष पराजित होगा।१०।
कुसुमाकर ने श्वसुर-गेह में
पाया मान अपार।
अति संतोषजनक थे आश्रम—
के आचार-विचार।
सास-सनेह और नलिनी का
प्रेम-सलोना भाव,
ललिता के परिहास भरें जो
मुनि-मन में भी चाव—।११।

भव का रस ले समाधान कर
सब का भले प्रकार,
कुसुमाकर ने किया श्वसुर प्रति
यों मृदु वचन - प्रसार--
"वहू चले अपने घर मेरी
मा का है आदेश,
क्षमा - याचना मा ने की है
अब न मिलेंगे क्लेश ।" ।१२।

उत्तर दिया क्षमापति ने तब
सत्वर सशयहीन,
वाणी थी उनकी अति अस्थिर
व्याकुल, विचलित, दीन।
"विदा नहीं होगी अब विमला
मेरा यही विचार,
धन्यवाद की भाजन है तब
माता सभी प्रकार ।" ।१३।

नेत्र क्षमापति के भर आये
पीडा से इस काल,
बडी बडी आसू की बूदें
ढलक पडी तत्काल ।
पूज्य श्वसुर की बातें सुन के
प्रगट व्यथा अवलोक,
कुसुमाकर ने किया निवेदन
भावुकता निज रोक ।१४।

पशुता का आश्रय ले यदि मैं
करता मा का त्याग,
पत्नी सग पृथक हो रहता
कुल का तज अनुराग।
लोक - वेद बतलाते इसको
अनौचित्य का धाम,
थू, थू कर देते मार जन
कलियुग का ले नाम।१८।

हम दोना के अचल धय से
चलित हुए भगवान,
ऐसी वधू पडोसिन आयी
ग्राम हुआ हैरान।
अति स्वतत्र नारी का उसमे
दिखा भयकर रूप,
उसके अनाचार से मा को
शिक्षा मिली अनूप।१६।

एक दिवस माता ने जाकर
श्रवण किये उपदेश,
क्या जाने किस भाँति हो गया
उसमें ज्ञानोन्मेष।
लगी उसी दिन से वह रोने
फूट फूट दिन रात।
कहती है कि बहू को मुझसे
मिला प्रखर आघात।२०।

आप वड ह, ज्ञानवान हैं
शुद्ध बुद्धि के धाम,
दयाशोल, अति धर्मपरायण,
यश 'आप का ललाम ।
औरा का उपकार निरतर
करना नित का काम,
विमल काव्य सो दिनचर्या है
सरस तथा अभिराम ।१५।

फिर भी विचलित देख आपको
मुझको ग्लानि अपार,
मुझको भो तो मिला आप से
सत्य, धम का सार।
मेरी मा अपयश - भाजन है
कहता सारा ग्राम,
इस देवी का कोत्तन होता—
रहता है सब ठाम ।१६।

जगत - समस्त अनाचारो का
कष्ट - सहन प्रतिकार,
देग तपस्या हो जाते हैं
रक्षक जगदाधार।
इस देवी ने सहन किये ह
दारुण क्लेश अनेक,
गाडा दाव निबाही मैने
मातृभक्ति की टक ।१७।

पशुता का आश्रय ले यदि मैं
करता मा का त्याग,
पत्नी सग पृथक हो रहता
कुल का तज अनुराग।
लोक - वेद वतलाते इसको
अनौचित्य का धाम,
थू, थू कर देते सारे जन
कलियुग का ले नाम।१८।

हम दोनो के अचल धैर्य से
चलित हुए भगवान,
ऐसी वधू पडोसिन आयी
ग्राम हुआ हैरान।
अति स्वतन्त्र नारी का उसमें
दिखा भयकर रूप,
उसके अनाचार से माँ को
शिक्षा मिली अनूप।१६।

एक दिवस माता ने जाकर
श्रवरण किये उपदेश,
क्या जाने किस भाँति हो गया
उसमे ज्ञानोन्मेष।
लगी उमी दिन से वह रोने
फूट फट दिन रात।
कहती है कि बहू को मुझसे
मिला प्रखर आघात।२०।

वहू क्षमा कर देगी मुझको
पाऊँगी तब शुद्धि,
आवे वह सद्बुद्धि दान दे
मेरी मिटे कुबुद्धि।
यों कह मौन हुआ कुसुमाकर
अतिशय आशावान
बोल नहीं कुछ सके क्षमापति
चिन्ता - मग्न महान।२१।

स्वल्प काल गम्भीर रहे फिर
गये स्वपत्नी पास,
परामर्श चाहा जब, करके
आतुर वचन - विकास—
विमला की माता ने दे दी
पत्री यह तत्काल,
विमला ने जो उसे लिखी थी
कहने को निज हाल—।२२।

"जननि! ढिठाई मैं करती हूँ
हूँ निमग्न – अज्ञान,
मेरा धर्म मुझे बतला दे
जिससे हो कल्याण।
तेरी ही शिक्षा से स्वामी
मेरे पूज्य महान।
वे स्वरूप हों तो अपने को
छाया लूँगी मान।२३।

मेरी याद भुला दें वे तो
यह दुर्भाग्य महान,
चरण - किंकरी यदि न बनावे
तो यह करुणा - स्थान ।
चाहे जहाँ रहूँ फिर अपने
दुर्दिन करूँ व्यतीत,
गाऊँ उनकी स्मृतियों ही के
पावन मधुमय गीत ।२४।

किन्तु मुझे जब ले जाने को
आये प्रिय प्राणेश,
मेरा भाग्य - कुमुद विकसाने
निकले नक्षत्रेश ।
तब मेरे सम्पूर्ण धर्म का
आग्रह यह अनिवार्य,
उनकी अनुगामिनी बनूं मैं
नहीं अन्य व्रत धार्य ।२५।

'पति - विहीन नारी का जीवन
मरुस्थल सुमन - समान ।
पति के विना व्यर्थ उसके सब
धर्म, कर्म, व्रत, ध्यान'—
द्विरागमन के समय दिये माँ !
तुमने ये उपदेश ।
इनसे ही भूषित रक्खा है
मैंने निज हृदेश ।२६।

मॉं, मुझको निलज्ज कहो मत
करुणा मुझ पर धार,
कहीं प्रमाद दिखे तो दे दो
मुझे क्षमा - आधार ।
हा, मात हो गया एक है
शोचनीय अपराध,
जिसके फल - स्वरूप हो मुझको
पीडा मिली अगाध ।२७।

चले गये थे इसी विपिन मे
देवर मुझको छोड,
घर तक पहुँचाने से भी मुँह
हाय लिया था मोड ।
तब असहाय अकेली वन मे
मैं थी अमित अधीर,
वज्र - कठोर उपेक्षा से थी
उठी हृदय मे पीर ।२८।

जिस प्रकार फिर मिले पिताजी
वह है तुमको ज्ञात,
एक बात ही का अब तेरे
उर मे है आघात ।
अधिक व्यथा से उद्विग्ना हो
विपदा से हैरान,
मैंने कही पिता से बातें
शिक्षा भुला महान ।२९।

पाया क्लेश पिताजी ने अति
जिससे हुआ अनर्थ,
देवस्वरूप कान्त ने पायी
आकर पीडा व्यर्थ।
अब तो जो हो गया, हो गया
व्यर्थ सकल अनुताप।
आगे कभी न आने दूगी
उर मे ऐसा पाप ।३०।

मेरी यही प्रार्थना है मा,
विलग न लो तुम मान,
अपनी भोली नन्ही बिमला
मुझे निरतर जान।
बात पिताजी मे कर बिगडी
बात बना अविलम्ब,
मेरे दुखो से दुख पाकर
धम भुला मत अम्ब ।३१।

अधिक कहूँ क्या बेटी होकर
मुँह पर लायी बात,
लज्जा हर लेती है सारी
विपदा का आघात।"
बिमला का पढ पत्र क्षमापति--
दृग मे आया नीर।
उमड़ उठी तन की पुलकावलि
उमँगा भाव अधीर ।३२।

(ललितपद छंद)

बोले—"धन्य कौन मुझ जैसा
जिसकी कन्या ऐसी।
सावित्री - सी धर्मपरायण
पति - रत गिरिजा जैसी।
चरचा फैल गयी क्षण भर में
विमला अब जायेगी।
सरस रसाल विपिन में करुणा—
रस की झर लायेगी।३३।

रोती और बिलखती थी मा
हृदय फटा जाता था।
ललिता, नलिनी का मुख पंकज—
ओप घटा जाता था।
अबलाश्रम की छोटी छोटी
कन्याएँ रोती थीं।
दिदिया बड़ी चली जाती है
सोच विकल होती थीं।३४।

(हरिपद छंद)

सबके चरणों पर गिर विमला
लेकर आशीर्वाद।
पति के संग चली निज गृह को
सम था हर्ष - विषाद।
क्रम क्रम से मध्याह्न हो गया
अर्द्ध भाग था शेष
विरम गया तरु - तल कुसुमाकर
वारण - हित पथ - क्लेश।३५।

एक ओर को सब कँहार भी
द्रुत पालकी उतार,
गाँजा पीने लगे देह मे—
हो नव बल - सचार।
उसी दिशा मे अन्य पालकी
दीख पडी उस काल,
उसने दिया सभी को क्रमश
कौतूहल मे डाल।३६।

धीरे धीरे निकट आ गयी
सशय रहा न लेश।
किन्तु बढी कुसुमाकर-मन में
भय - भावना विशेष।
लगा सोचने क्या कारण है,
क्या घट गया अनिष्ट
इस प्रकार आता अम्मा को
कैसे होगा इष्ट ? ।३७।

हाय विलम्ब किया अति मैंने
माँ ने पाया क्लेश।
कैसे वदन दिखाऊँ कर कृति
लज्जाकर सविशेष।
सेवा में विलम्ब करना भी
उचित न किसी प्रकार।
मथने लगे विचार विरोधी
उर को बारम्बार ।३८।

दौड गया पालकी पास तो
देखा, बैठी अम्ब ।
क्या जाने किन चिन्ताओं के
निधि मे पैठी अम्ब ।
छू के चरण कुशल पूछी तो
रोकर बोली अम्ब—
"मुझे दिखा दो वधू कहाँ है"
चली निकल अविलम्ब ।३९।

कुसुमाकर ले गया जननि को
बिमला थी जिस ठौर,
बिमला गिरी अम्ब-चरणों पर
कथन करूँ किस तौर ?
जिसने देखा सास बहू का
वह सम्मिलन - सनेह
उसने ही समझा मा बेटी
हैं हो रही विदेह ।४०।

कुसुमाकर यह दृश्य देख था
आत्म - विस्मरण - लीन ।
जल मे तिरने लगे विकल हो
सरल विलोचन - दीन ।
बारम्बार चूम मुख बोली
लेकर भावावेश,
बेटी, चल लक्ष्मी हो घर की
मिटें सभी के क्लेश ।४१।

मैं अभागिनी हूँ हे बेटी,
विघ्न हुई थी बुद्धि,
तेरे शील और गुण के प्रति
थी न भाव की शुद्धि।
सीता सी गुणमयी बहू तू
बेटा जैसा राम,
सारे गाँव बीच किसका है
अमल ज्योतिमय धाम ? ।४२।

सिर आँखों पर तुझे रखूँगी
सेऊँगी ज्यों पान।
तेरी प्रफुल्लता से लूँगी
प्रफुल्लता - वर दान।
चल बेटी, तू उजड़े घर में
कर प्रकाश - सचार।
गृह - प्रागण - मानस की कमला—
सी दे सुछवि प्रसार ।४३।

सकल कँहारों को भी विमला—
की दुर्गति थी ज्ञात।
उनकी हृदय - कली भी विकसी
देख बनी सब बात।
कहा एक ने धीरज का फल
होता कितना मिष्ट !
पकड धर्म को बैठा तो
मिट जाता आप अनिष्ट ।४४।

कुसुमाकर ने कहा, जननि तू
पी ले शीतल नीर ।
होगी तू अन्यथा मार्ग मे
ऊष्मा - व्यथित अधीर ।
तदनतर मिष्टान सहित जल
दिया प्रेम के साथ ।
बोली मा—"सुत चिरजीव तुम
जग को करो सनाथ।" ।४५।

कुसुमाकर ने कहा विनय से—
"जल्दी की क्या बात ?
हेतु नही भय का, चिन्ता का
होता मुझको ज्ञात ।"
मा ने कहा, "स्वप्न मे आया
दुर्गा का निर्देश ।
विघ्न-ग्रस्त विमला का आना
सशय - मग्न विशेष ।४६।

तुम्हे विलम्ब लगा होने तो
मैं हो गयी सशक ।
चलना ही मैंने निरधारा
धोने हेतु कलक ।
तदनतर जल पीकर राधा
गयी यान में बैठ,
और गयी बिमला भी सुखमय
गर्व सिंधु में पैठ ।४७।

कुसुमाकर ने कहा कँहारो
होकर आंधी रूप,
एक घडी मे घर पहुँचाओ
मानूँ वीर अनूप ।
किया कँहारो ने वैसा ही ।
दौडे वे ज्यो वाण ।
उनका वह उत्साह देख कर
जीवित हो मृयमाण ।४८।

कुसुमाकर के श्रमित गात से
वही स्वेद की धार,
किंतु लगा कर लाग चला वह
करता बल सचार ।
वे उद्दिष्ट ग्राम मे आये
इस विधि सहित उमंग ।
चरचा फैल गयी उर उर में
उमडी तरल तरग ।४९।

(ललित पद)

विमला को देखने पधारी
अधिक वयस की नारी ।
आशीर्वाद लगी सब देने
फूलो ज्यो फुलवारी ।
ऐसा हर्ष मनाया सब ने
रत्नराशि ज्यो पायी
अनुभव होने लगा सभी को
ज्योति नयी सी आयी ।५०।

(हरि पद)

दयावती में भी परिवर्त्तन
दिखा विचित्र महान,
इस विकास ने भी विमला का
बढा दिया यश - मान ।
दोनों बहुओं - प्रति राधा का
था अनुराग अपार,
रोष-भाव के भीतर भी अब
दिखता था अनिवार ।५१।

उस दिन से वह ग्राम दिव्य था
ऋद्धि - सिद्धि - अधिवास
रहा न शेष ग्राम में कोई
कलह, द्वेष या दान ।
पुरुष और नारी सब करते—
थे नारी - सम्मान ।
देवी - रूप समझते थे वे
आदर - योग्य महान ।५२।

महिलाएँ गृह - सेवा में थीं
करतीं निज उत्सर्ग ।
उनको प्रिय पति की सेवा थी
इष्ट नहीं था स्वर्ग ।
अधिकारों के लिए न सदा
करती थीं [illegible] मन ।
[illegible] के होने पर भी
[illegible] थीं न [illegible] ।५३।

ग्राम - अंगनाओं को बिमला
देती थी उपदेश—
सीता - सावित्री सी साध्वी——
होगा तव उद्देश ।
मातृजाति की लज्जा रक्खो
अमित साधना झेल ।
जीवन की कठोरताओं को
मानो केवल खेल ।५४।

(वीर छंद)

उच्छृंखलता का न राज्य हो
अनाचार का हो न प्रसार,
कष्ट सहन से, आत्मत्याग से
भोगें सब अपने अधिकार ।
स्वतन्त्रता पाकर महिलाएँ
बनें धर्म शासित परतन्त्र,
त्यागमयी वे त्यागमूर्त्ति सी
पढ़ें सदैव प्रेम का मन्त्र ।५५।
